प्रेमी का उपहार

प्रेमी का उपहार

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के गद्य-गीतों के संग्रह 'लवर्स गिफ़्ट'
का सरस हिन्दी भावानुवाद

भावानुवादक
दयालकृष्ण शर्मा

आत्माराम एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली - ६

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य	:	तीन रुपए
प्रथम संस्करण	:	अक्तूबर, १९५८
आवरण	:	ना. मा. इंगोले
मुद्रक	:	हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली

पुस्तक के सम्बन्ध में

"अर्वाचीन जीवन प्राचीन की सर्वश्रेष्ठ साहित्य कला से प्रेरित होकर भविष्य को उज्ज्वलतम बना सकता है," ऐसा मेरा विश्वास है। अतः इसी विश्वास की अनुपम शक्ति से प्रेरणा पाकर लगभग दो वर्ष तक इस अकिंचन ने गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के गूढ़ साहित्य-दर्शन का मंथन किया, और वह विशेषतः इसलिये कि प्रस्तुत ग्रन्थ के मौलिक रूप से उसका रूपान्तर करते समय मैं उनकी गम्भीरतम भावाभिव्यक्ति को छिपा न रहने दूँ।

मेरे विचार से 'प्रेमी का उपहार' एक इष्ट रूपान्तर होने के साथ-साथ अपने मौलिक रूप में एक अभीष्ट अभिवृद्धि भी है।

प्रत्येक विषय के पहले जो शीर्षक दिये गये हैं उनमें गुरुदेव के बृहद् भावों की एक छोटी-सी सृष्टि है, पर प्रस्तुत संकलन का प्रणय-निवेदन एकमात्र छोटी-सी सृष्टि नहीं अपितु वह भावना का समूचा राष्ट्र है जो संस्कृति की नौका में बैठकर जीवन के स्वर्गीय आदर्श की ओर इंगित कर रहा है।

विश्व साहित्य में आदर्श और विश्व की मानव आत्मा में प्रेम, शान्ति और एकता का मन्त्र उच्चारण करने वाले इस साहित्यिक-यति के ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद करने के लिए जो उत्साह मुझे भूदान-यज्ञ के महा-प्रणेता आचार्य विनोबा भावे द्वारा राष्ट्र को किये गये आदेशों से मिला है उसके लिए मैं श्रद्धेय आचार्य जी का अन्तःकरण से कृतज्ञ हूँ।

—दयालकृष्ण शर्मा

"अंग्रेजी भाषा में निपुण भारतीय यदि अंग्रेजी की एक भी पुस्तक का अनुवाद अपनी योग्यतानुसार भारत की किसी भी भाषा में करने लगें तो वास्तव में राष्ट्रीय साहित्य-कोष की अभिवृद्धि में वे बड़ा सहयोग दे सकेंगे।"

—आचार्य विनोबा भावे

क्रम

मृत्यु को भी अमृत पिलाने वाली वस्तु केवल एक प्रेम है

शाहजहाँ : तुमने अपनी राजसी शक्ति को जाने दिया क्योंकि तुम्हारी इच्छा तो प्रेम के एक अश्रु-बिंदु को अक्षय बनाना चाहती थी।

मानव हृदय के प्रति समय के पास कोई दया नहीं—उसके दुःखमय द्वन्द्व को केवल स्मृति बनाने की इच्छा से वह तो उस पर हँसता है।

सौन्दर्य से तुमने उसे आकर्षित किया, उसे अपना वन्दी बनाया और साथ ही रूप-हीन मृत्यु को भी तुम्हीं ने तो अक्षय रूपी कीरीट पहनाया था।

वह रहस्य जो रात्रि की शान्ति में तुम्हारे प्रेम रूपी कानों में कहा गया था, वही पत्थर की शाश्वत् शान्ति में लिखा रखा है।

यद्यपि साम्राज्य टूट कर धूलि में गिर जाते हैं और सदियाँ केवल छाया में खो जाती हैं, पर संगमरमर का वह टुकड़ा तो अभी भी सिसक-सिसक कर तारों से कहता है—'मुझे याद है।'

'मुझे याद है।' वह कहता है। पर जीवन रूपी नारी तो भूल बैठती है क्योंकि वह तो सदैव केवल अनन्त को पुकारा करती है, अपनी यात्रा के लिए भी भारहीन होकर जाती है और यहाँ तक कि अपनी स्मृतियों को भी सौन्दर्य के व्यक्त रूपों पर न्यौछावर कर देती है।

जो सुन्दर है वह आकर्षक है, जो आकर्षक है वह भ्रमात्मक है

मेरे अनुराग ! आओ, उद्यान की सैर के लिए चलोगे ? उन महत्त्वाकांक्षी पुष्पों के समीप से चलो जो हटात् तुम्हारी दृष्टि पर आ पड़ेंगे। जब उनके समीप से निकलो तो दैवयोग से किसी आनन्दमय स्थान पर रुकते जाना—वही स्थान सूर्यास्त के क्षणिक् विस्मय के समान प्रकाशमय तो होगा ही परन्तु नेत्रों के लिए नयनाभिराम होते हुए भ्रमात्मक भी होगा।

क्योंकि प्रेम का उपहार लज्जा है तभी तो वह अपना नाम कभी नहीं बताती। वह तो बस छाया के अन्तराल से निकलकर धूलि के सहारे एक आनन्दमय कम्पन बिछा देती है। उसी लज्जा-मय उपहार को या तो ले लो अथवा सदैव के लिए खो दो।

किन्तु उपहार जो प्राप्त है—केवल दुर्बल-सा एक अकिंचन पुष्प है अथवा वही एक दीप है, जो अभामय है और जलता ही रहेगा।

मधु को तो अधरों पर ही समर्पित हो जाना चाहिए

इतने घने समूहों में फल आते हैं मेरे उद्यान में कि एक दूसरे से टकराने लगते हैं और एक दूसरे को धक्का मारने लगते हैं। —पूर्णता के आवेश में प्रकाश को प्राप्त कर एक दम उठ-से बैठते हैं वे।

मेरी रानी! तुम सगर्व मेरे उद्यान में आओ, किसी छाया के नीचे बैठो, थके हुए फलों को उनकी शाखाओं से तोड़ लो और उनसे कहो कि वे अपने मधुमय भार को तुम्हारे अधरों पर समर्पित कर दें।

मेरी वाटिका में तितलियाँ अपने पंखों को सूर्य-प्रकाश में झाड़ा करती हैं। तब, उन्हीं के ऐसे व्यवहार से पत्तियाँ कंपित हो उठती हैं और फल पूर्णता प्राप्त करने के लिए आतुर होकर चिल्लाने लगते हैं।

उसके प्रति जो मेरा है—'प्रेम', वही मेरा जीवन भी है

वह बाला तो मेरे हृदय के समीप है और इतनी ही समीप है जितनी कि किसी चरवाहे की कली अपनी भू-माता के।

वह तो इतनी मधुमय है मेरे लिए जितनी कि निंदिया थके पैरों के लिए। उसके लिए जो मेरा प्रेम है, वही प्रेम मेरा जीवन है जो अपनी पूर्णता की ओर बह रहा है—ऐसे ही जैसे एक नदिया पतझड़ की बाढ़ में बहती है—भागती हुई और शान्ति से प्रेरित, त्यागमय होती हुई।

मेरे गीत भी तो प्रेम के ही अनुरूप हैं और ऐसे ही अनुरूप हैं जैसे किसी झरने की झरझर—वह जो गाता है अपनी लहरों और धाराओं समेत गाता है।

जो मेरा पूजित है, केवल वही मुझे मिल जाय

मैं तो मागूँगा—मैं माँगता रहूँगा और अधिक से अधिक माँगता रहूँगा।

चाहे प्रकाश अपने सम्पूर्ण तारागणों सहित मुझे मिल जाय अथवा चाहे यह संसार ही अपनी अनन्त संम्पत्ति-सहित ही मुझे क्यों न मिल जाय, पर तिस पर भी मैं तो मागूँगा और माँगता ही रहूँगा।

परन्तु, यदि केवल वह मेरी हो जाय तो पृथ्वी के एक छोटे से कोने में पड़ा रहकर भी मैं संतुष्ट रहूँगा और फिर कुछ भी नहीं मागूँगा।

शान्त न बैठ सको तो अपने आँसुओं को भी दूसरों से न कहो

मेरे कवि ! बसंत के उस अपव्ययी दिवस के प्रकाश में तुम गाओ। उनके प्रति गाओ जो तुम्हारे समीप से बिना कुछ अधिक रुके ही निकल जाते हैं। उनके प्रति गाओ जो हँसते हुए और भागकर तुम्हारे समीप से निकल जाते हैं किन्तु पीछे मुड़कर भी नहीं देखते। उनके प्रति गाओ जो अकारण ही हर्ष के हर्षोन्माद में खिल उठते हैं किन्तु एक ही क्षण में दुःखित हुए बिना ही कुम्हला जाते हैं।

ना तो शान्त ही बैठो और न किसी से कहो ही—अपने गत जीवन के आँसुओं और मुस्कानों को—जो मनकों की माला में पिरोये रखे हैं।

अधखिले पुष्पों से गिरी हुई पँखड़ियों को उठाने के लिए मत रुको। उन वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए खोज न करो जो स्वयं तुम्हें नहीं खोजना चाहतीं।—और ना ही उस अर्थ को जानने के लिए खोज करो जो सरल नहीं है।

तुम्हारे जीवन में रिक्त स्थान जहाँ-जहाँ भी है उन्हें वहीं रिक्त रहने दो क्योंकि संगीत का उद्रेक तो उन्हीं की गहनता से उदित होगा।

तुम्हारी कलाई पकड़कर पुष्पों की शृंखला से—
उसे बाँध दूँ और तुम्हें अपना बना लूँ

जो कुछ अब शेष है वह थोड़ा ही है। अतिरिक्त इसके जो अवशेष है—वह सब तो एक निश्चित ग्रीष्म ऋतु में बीत गया। किन्तु शेप भी अभी इतना है कि एक गीत बनाकर तुम्हें सुना दूँ, सविनय तुम्हारी कलाई पकड़कर पुष्पों की शृंखला से—उसे बाँध दूँ, तुम्हारे कानों में एक गोल, गुलाबी, मोती-सी, एक शर्मीली-सी बात कह दूँ और एक संध्या समय खेल के रूप में एक दाँव लगा दूँ और पूर्णतया हार जाऊँ।

मेरी नौका तो एक छोटी-सी अकिंचन वस्तु है जो इतनी भी समर्थ नहीं कि वर्षा में उद्दण्ड लहरों को पार कर सके। किन्तु, फिर भी, यदि तुम सरलता से उस पर पदार्पण करो तो मैं धीरे-से तुम्हें (किराये बिना ही) किनारे की साया तक पहुँचा दूँगा, जहाँ छोटी-छोटी लहरों में काला पानी एक स्वप्न में बिखरी निंदिया के समान दीख पड़ता है—और जहाँ बतखों की कूँ-कूँ से सनी बोली झुकी हुई शाखाओं से निकलती है और मध्य-दिवस में विश्राम के लिए बनी हुई छायाओं को दु:खमय बना देती है।

दिवस का अवसान होते-होते जब तुम थक जाओगी, तब मैं किसी नत-मस्तक श्वेत-कमल-पुष्प को तोड़कर तुम्हारे केशों में लगा दूँगा और स्वयं ही तुमसे बिदा माँगकर चला जाऊँगा।

नारी ! तुम्हारे प्रति नर की श्रद्धा सबसे अधिक है

तुम्हारे लिए मेरे पास स्थान है। तुम चावलों की छोटी-सी गठरी सहित अकेली हो। मेरी नौका पूर्णतया भरी हुई है, बोझ से खचाखच लदी हुई है, किन्तु फिर भी, मैं तुम्हें कैसे लौटा दूं ?

तुम्हारा युवा शरीर कोमल, पुलकित और स्पंदित है। तुम्हारे नयनों के कोरों में एक टिमटिमाती मुस्कान है और तुम्हारे वस्त्र भी वर्षीले मेघों के तुल्य रंगीन हैं।

यात्री-गण भिन्न-भिन्न मार्गों और स्थानों को चल देंगे। पर तुम एक क्षण के लिए मेरी नौका के सबसे ऊँचे और अग्रगण्य स्थान पर बैठ सकोगी और यात्रा की समाप्ति पर भी तुम वहीं बैठी रहोगी और कोई तुम्हें पीछे न धकेल सकेगा।

'तुम कहाँ जाती हो और किस स्थान को जाती हो ?—क्या अपने चावलों की गठरी को सुरक्षित रखने जा रही हो ?'—मैं तुमसे ऐसा प्रश्न न करूँगा। किन्तु पाल उतारते समय और नौका को बाँधते समय जब मैं बैठूँगा तो संध्या समय भी विस्मित होकर यही मनन करता रहूँगा—'तुम कहाँ जाती हो और किस स्थान को ?—क्या अपने चावलों की गठरी को कहीं सुरक्षित रखने जा रही हो ?'

काश, धुंधले प्रकाश में तुम अपने मार्ग से विचलित हो जाओ, तो क्या बात है ?

नारी ! तुम्हारी डलिया भारी है। तुम्हारे पैर थक गये है। बताओ तो ! कहाँ के लिए और किस लाभ की आशा को लेकर तुम निकल पड़ी हो। तुम्हारी राह लम्बी है और मार्ग की धूलि भी सूर्य से जली जा रही है।

देखो तो ! ये झील भी गहनता और पूर्णता-मय है।—इसका जल भी कउए की आँखों के सदृश काला है। इस झील के किनारे भी ढालू है और घास की नम्रता में लीन हो रहे है।

अपने थके पाँवों को इसके पानी में डुबा लो। तब मध्यान्ह ज्वार की वायु अपनी अंगुलियों से तुम्हारे केशों को कुरेदेगी। तब कबूतर अपने शयन-गीत तुम्हें सुनावेगे और उसी समय पत्तियाँ भी अपनी छायाओं में छिपे रहस्य को तुमसे कह देंगी।

और क्या बात है ? क्या हो जायेगा ?—यदि उसी प्रकार सारा दिन बीत जाय तथा सूर्यास्त आरम्भ हो जायें और उस निर्जन वन के धुंधले प्रकाश में तुम अपने मार्ग से विचलित हो जाओ ?—अथवा यही कहीं खो जाओ ?

डरो नही ! देखो, सामने ही मेरा घर है—कुस्मित और प्रफुल्लित हीना-पुष्पों की झाड़ियों के समीप। मैं तुम्हें मार्ग बता दूँगा। मैं ही तुम्हारे शयन का भी प्रबन्ध कर दूँगा। उषा कालीन बेला में जब दूध-दूहने का शब्द पक्षियों को जगा देगा, तब ही मैं भी तुम्हें जगा दूँगा, अच्छा।

मोह में शक्ति है कि किसी को भी वशीभूत कर ले

किस मोह की मारी ये मधुमक्षिकायें अपने-अपने घर से निकल भागी हैं? ये तो अदृश्य मार्गों की अनुगामिनि हैं, ना!

इनके चंचल पंखों में यह किसका कलरव बोल रहा है?

पुष्पों की आत्मा में सुप्त संगीत को क्या ये सुन सकती हैं?

पुष्पों की उस कोष्ठ तक ये कैसे पहुँच सकतीं हैं—जहाँ मधु लज्जित और शान्त बनकर लेटा हुआ है।

वह जो चाहे करे उसे सब कुछ कर लेने दो

उस समय वह केवल कुसुमित पत्तियों की एक कली थी जो ग्रीष्म में सागर के समीप वाले उद्यान में आ गई थी। वह तो केवल एक आवेषमय शब्द थी जो दक्षिणी वायु में प्रवाहित थी—उस समय वह केवल एक सुस्त-सी नोंची हुई-सी गीत की एक टुकड़ी के समान थी। अतः इतनी छोटी वस्तु के 'अन्तर में' उसी को पाकर दिवस पूर्ण हो गया।

उस प्रेम को प्रफुल्लित हो लेने दो जो ग्रीष्म में सागर के समीपस्थित उद्यान में आवेगा।—और तभी मेरे आनन्द को भी जन्मित होने दो—उसे अपनी तालियाँ बजाने दो—उत्तेजनामय गीतों को गा-गा कर नाचने दो और साथ ही—उषा के नयनों को मृदु आश्चर्य से चकित होकर खोल देने दो।

तुम समझो ! तुम्हारी ही प्रेरणा तुम्हारे प्रति मेरे प्रेम का कारण है

अनन्तकाल पूर्व जब तुमने ईश्वरीय उद्यानों के दक्षिण मार्ग से प्रवेश किया—इस संसार में और प्रथम बार पृथ्वी के यौवन तल पर आये, तब हे बसन्त ! स्त्री और पुरुष आनन्दविभोर हो, हँसते-नाचते और एक-दूसरे पर पुष्प-पराग फेंकते हुए हर्षोन्माद में तुम्हारी ओर दौड़ पड़े।

हर वर्ष और प्रत्येक वर्ष क्या तुम वही पुष्प नहीं लाते जो अपने मार्ग में तुमने सबसे पहले वाले चैत माह में बिखेर दिये थे। अत: आज उनकी विक्षिप्त सुगन्धि में वे ही पुष्प उन दिनों के लिए सिसकते हैं जो आज स्वप्नवत् हैं और गत् संसार के लिए पश्चात्ताप-सा करते हुए जान पड़ते हैं।

तुम्हारी कोमल पवन उन प्रेम की कहानियों से लदी हुई है जो मानव की भाषा से सदैव के लिए तिरोहित हो गई हैं।

बस एक दिन ! तुम एक आश्चर्यमय प्रेरणा को लेकर मेरे जीवन में आ गये और तब प्रथम बार तुमने मुझ में प्रेमांकुर उत्पन्न कर दिया। तब से उस अनुभवहीन आनन्द का कोमल रोमांच प्रत्येक वर्ष तुम्हारे पीले पुष्पों की हरी-हरी कलियों में छिप-छिप कर आता है। मैं यह भी बता दूँ कि तुम्हारे लाल गुलाबी फूल भी उस अशांत शान्ति से त्रस्त है जो मुझ में अव्यक्त

है। पर गीत बनाते समय की जो कुछ भी स्मृति अवशेष रह गई, वही मई माह के दिनों में तुम्हारी पत्तियों मे रोमांचित उत्तेजना उत्पन्न करती हुई मुझ में न जाने क्यों बार-बार जन्मित हो उठती है।

•

तुमने मुसकराने की चेष्टा की और मैंने तुम्हारा घूँघट-पट हटाने की

गत रात्रि को उस बगिया में मैंने तुम्हारे जीवन को अपनी यौवन-सुरा अर्पित की थी। तुमने उस प्याले को अपने अधरों से लगाया, अपनी आँखें बन्द कीं और ज्यों ही तुम मुस्करायीं, त्यों ही मैंने भी साहस करके तुम्हारा घूँघट-पट हटा दिया—तुम्हारे बंधे हुए केशों को खोल दिया और मधुमय शान्ति से प्रेरित तुम्हारे इस मुख को अपने वक्षःस्थल पर खींच ही लिया।—मैंने ऐसा तब किया था जब गत रात्रि के चन्द्रस्वप्नों ने समस्त सृष्टि की निद्रा को वशीभूत कर उस पर अपना अस्तित्व जमा लिया था।

किन्तु आज स्नानित हो और श्वेत साड़ी पहने तथा हाथों में फूलों की डलिया लिए, तुम ओस की शीतक-शान्ति से प्रेरित बेला में किसी देव-मन्दिर जा रही हो। अतः में भी इस एकाकी मन्दिर-मार्ग के समीप स्थित उषा की शान्ति में किसी वृक्ष की छाया में अपना शीश नवाये खड़ा रहूँगा।

तुम्हारी काली आँखों को देखकर ही तो बादल बरसते हैं

मेरे अनुराग ! आज यदि मैं व्यग्र हूँ तो मुझे क्षमा कर दो। यह तो ग्रीष्म की केवल पहली ही बौछार है जब नदी के जंगल भरे हुए हैं, और तभी यौवन की पराकाष्ठा पर पहुँचे हुए ये कदम-वृक्ष अपनी सुगन्ध-रूपी सुरा के प्याले द्वारा अपने समीप से जाती हुई वायु को मोहित कर लेते हैं।

आकाश के प्रत्येक कोने से देखो—कि आकाश विद्युत अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से कटाक्ष कर रही है और साथ ही यह भी अनुभव करो कि दिशाओं की पवनें तुम्हारे केशों में बिखरी पड़ी हैं।

मेरे प्रेम ! क्या तुम मुझे क्षमा नहीं कर दोगे—हाँ, यदि मैं आज ही तुम्हें अपनी श्रद्धा अर्पित कर दूँ। देखो ! प्रतिदिन का संसार वर्षा को अपने धुंधलेपन में छिपाये रहता है। गाँवों में सारा काम रुक गया है क्योंकि सारे चरवाहे उजाड़ पड़े हैं।

तुम्हारी काली-काली आँखों में आने-वाली वर्षा का संगीत है। तुम्हारे ही द्वारे तो सावन का महीना अपने नीले वस्त्रों में तुम्हारे केशों के लिए पुष्प लिए खड़ा रहता है।

गाँव में उसके पड़ौसी—सब ही उसे 'काली' कहते हैं किन्तु मेरे लिए तो वह—सच जानो—मेरे हृदय की 'लिलि' है, यद्यपि लिलि के समान श्वेतवर्ण वाली वह नहीं।

मैंने सबसे पहले उसे खेतों में देखा और उस समय देखा जब प्रकाश घने बादलों के कारण क्षीण बना हुआ था। उस समय उसका सिर आंचलहीन था, उसका घूँघट-पट हटा हुआ था और उसके केश स्वयं ही ढीले होकर उसकी गर्दन पर लटके हुए थे। हाँ! वह 'काली' हो सकती है जैसे कि 'वे' गाँव में कहते हैं, पर मैंने तो उसकी काली आँखें देखी हैं और उनसे मैं प्रसन्न हूँ।

जब चंचल वायु की नाड़ी ने तूफान मचा दिया तब वह अपनी कुटिया से बाहर को दौड़ी और उसी समय उसने अपनी चितकबरी गैया को निराशा में रंभाते देखा। एक क्षण के लिए उसने बड़ी-बड़ी आँखों को उठाकर बादलों को देखा और वह रोमांचित हो गई—यह जानकर कि अब तो आकाश से वर्षा आ रही है। मैं तो चावलों के खेत के एक कोने पर खड़ा हो गया और यदि उसने मुझे देख लिया तो इसका कारण यह था कि वह मुझे जानती थी और कदाचित मैं भी उसे जानता था।

वह इतनी 'काली' है जितनी कि ग्रीष्म ऋतु में वर्षा की संदेश-शक्ति—उतनी काली जितनी कुसुमित वन की छाया

और हाँ ! मुझे ठीक मालूम है—मई की कामुक रात्रि में किसी अन्जान प्रेम की प्राप्ति के लिए जो एक व्यग्र इच्छा होती है 'वह' उसी के समान काली है।

उसकी याद कैसे कोई भूल जाय

'वही' यहाँ तलैया के पास रहा करती थी—इसी तलैया के पास जिसकी सीढ़ियाँ भग्नावशेष में जाती दीख पड़ती हैं। संध्या समय कितनी ही बार उसने उस चँदा को देखा है जिसे कितनी ही बार केवल बाँस की पत्तियों के कम्पन से ही चक्कर आ गये थे। वर्षा के बहुत-से ऐसे दिन भी आये जब भीगी धरती की सुगन्ध उसके समीप से निकलकर चावलों की नवीन टहनियों पर छा गई थी।

उसका 'प्यार का नाम' यहाँ उन सब लड़कियों को ज्ञात है जो यहाँ खजूर के झुंडों और उनके सामने बिछे हुए बड़े-बड़े मैदानों में बैठकर बातें करतीं और सरदी के लिए अपनी रजाईयों में रूई भर कर टाँके लगाती थीं।

अपने छोटे-छोटे पैरों से वह इसी तलैया में तैरा करती थी और उन्हीं पैरों की याद यह पानी अपनी गहराई में छिपाये हुए है। वह नित्यप्रति इस तलैया में नहाने आया करती थी और जब भीगे पैरों से गाँव की ओर लौटा करती थी तब उसके पैरों के निशान गाँव की पगडंडी पर उसकी अमर याद बनकर रह जाते थे।

उसकी स्मृति भला कैसे मिट जाएगी। क्योंकि आज जितनी भी स्त्रियाँ उस तलैया पर पानी भरने के लिए आती हैं—उन सभी ने उसे सादा-सी हँसी की बातों पर भी मुसकराते देखा है।

उसे कौन भूल जाएगा। क्योंकि उसके दरवाजे पर, वह बूढ़ा किसान भी जो अपने बैलों को उस तलैया में नहलाने ले जाता था, नित्यप्रति रुकता था और उसे नमस्ते करता था।

कितनी ही नौकाएँ इस गाँव के समीप से निकल जाती हैं, कितने ही यात्री उस वट-वृक्ष के नीचे विश्राम करते हैं, कितने ही दर्शकों के झुंड उस सामने वाले किले को पार कर बाज़ार चले जाते हैं पर कभी भी वे गाँव की सड़क के समीप स्थित इस स्थान की ओर नहीं देखते। वे क्यों नहीं देखते इस स्थान को, जो तलैया के समीप ही उसकी सीढ़ियों के भग्नावशेष में बना हुआ है ?

क्या वे ईर्ष्या-वश उस स्थान को नहीं देखते ? क्या इसलिए नहीं देखते कि वह यहाँ रहा करती थी और मैं उसे प्यार करता था ?

मैं जानता हूँ किस विरह की वेदना से कमलनि पीली पड़ गई है।

युगों बीत गये जब मधुमक्खियाँ ग्रीष्म के उद्यानों की ओर उड़ान भरा करती थीं, चन्द्रमा रात्रि के श्वेत-कमल को देखकर मुस्कराया करता था, आकाश की चंचल बिज्जु अपने मादक चुम्बन से बादलों को चूमती और भाग जाया करती थी—तब मैं भी एक कोने में छिपकर यह सब कुछ देखने का आदी-सा बन गया था। पर कोई मुझे नहीं देख सकता था क्योंकि मैं वृक्षों और बादलों में आत्मसात्-सा हो जाता था। मुझे याद है वह अपने हृदय को एक पुष्प की भाँति शान्त रखता था, एक पीले विरही चन्द्रमा के समान अपने स्वप्नों द्वारा उसे देखा करता और ग्रीष्म-ऋतु की गरम पवन के समान बिना मतलब इधर-उधर भटका करता था।

पर एक दिन चैत मास की सन्ध्या में जब चाँदनी बबूले की नाँई गोधूलि की गहनता से निकलकर चारों ओर छिटक गई थी, उसी समय एक कोमलांगी बाला पौधों में पानी लगाते समय खोई-हुई-सी मालूम पड़ रही थी, दूसरी अपनी हिरणी को खिलाने में मस्त-सी थी और तीसरी अपने मोर को नचाने के प्रयत्न में अपने को भूल गयी थीं। कवि ने यह सब कुछ देखा और वह गा-गा उठा—'ए' ! संसार के रहस्य को मैं खोलना चाहता हूँ। अतः तुम सुनो। क्योंकि मैं जानता हूँ कि यह कमलनि क्यों पीली पड़

गई है। मैं बताऊँ—इसे चन्द्रमा के प्रेम की कामना है। कमलनि सूर्य-देव के दर्शनार्थ अपने घूँघट-पट को फेंक देती है—क्यों? यदि इसी बात पर किंचित् मनन करोगे तो जान जाओगे।

बड़े-बड़े ज्ञानी नहीं मानते कि भंवरा अधखिली चमेली के कानों में क्यों कुछ गुंजार कर कह देता है और फिर चला जाता है?—किन्तु कवि यह भी जानता है।

सूर्य तो बस लज्जित होकर छिप गया और चन्द्रमा वृक्षों के झुरमुट के पीछे निरुद्देश्य भटकता रहा पर दक्षिण बयार ने धीरे से जाकर न जाने क्या उस कमलनि के कानों में कह दिया—नहीं! उसने कहा होगा कि कवि इतना भोला नहीं जितना कि वह जान पड़ता है। तब क्या था। युवक और युवतियाँ तालियाँ बजाने लगे और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे—'अब क्या है। संसार का रहस्य तो हमें ज्ञात हो गया।' तत्पश्चात् उन्होंने एक-दूसरे के नयनों में देखा और गाने लगे—'अब यदि समस्त संसार का वायुमंडल भी हमारा रहस्य जान जाये तो भी कोई बात नहीं।'

बसंत का प्रफुल्लित पुष्प-प्रेम जाड़े के निर्दयी विरह से कब तक न टूटेगा

अपना हृदय मुझे दे देने पर तुम व्यग्र बन जाओगी—यह समझ लो। ऐसा करने पर तुम्हारा जीवन भी चिन्तामय बन जाएगा। देखो ! चौराहे के समीप ही मेरा मकान है जिसका दरवाजा खुला हुआ है। और सुनो ! मेरा मन अधिकतर अस्थिर रहा करता है क्योंकि मैं एक गायक हूँ और गाया करता हूँ।

यदि तुमने मेरी बात समझे बिना ही अपना हृदय मुझे दे ही दिया और फिर बाद में कुछ प्रश्न किया तो देखो ध्यान रखो—उसका उत्तर देने वाला मैं नहीं। यदि अपने गीतों के मध्य में तुम्हारे प्रति अपने किसी वचन को पूरा करने की शपथ लेता हूँ तो केवल इसलिए कि तुम मुझे उस समय अवश्य क्षमा कर दोगी जब संगीत के शान्त होने पर मैं इतना उतावला हो जाऊँ कि तुम्हारे प्रति अपने वचन का पालन न कर सकूँ। हाँ ! ऐसा क्यों नहीं हो सकता कि बसंत का प्रफुल्लित पुष्प-प्रेम जाड़े के निर्दयी विरह से कब तक न टूटेगा।

मैं तुमसे फिर कहता हूँ—यदि अपना हृदय ही मुझे दे देने पर तुली हो तो देखो ! इस हृदय देने की घटना को सदैव याद न रखना। जब तुम्हारे नयन प्रेम-गीत गायेंगे और तुम्हारा मधुर कंठ लहरों की तरह हँस देगा तब समझ लेना कि तुम्हारे

प्रश्नों के प्रति मेरे जितने भी उत्तर होंगे वे सब उदण्डता के उदाहरण होंगे और साथ ही अनुचित सत्य के प्रतीक भी होंगे—वे उत्तर सदैव ही विश्वसनीय होंगे पर सदैव ही तुम्हें उन्हें भूलना भी होगा।

युवक वनछयाओं की मानवहीन शान्ति में अपना जीवन-यापन करें

यह तो पुस्तकों में लिखा हुआ है कि पचास वर्ष की आयु प्राप्त करने पर मनुष्य को संसार त्यक्त कर देना चाहिए और उस वन-शान्ति की ओर चल देना चाहिए जहाँ सन्यास के दर्शन होते हैं। परन्तु कवि यह घोषित करता है कि वन-सन्यास तो केवल युवक के लिए है क्योंकि वन स्थान ही पुष्पों का स्थान है—उनकी जन्म-भू है, जहाँ पर चिड़ियाँ और मधुमक्खियाँ अपने किसी प्रिय का पीछा करती हैं और जहाँ इधर-उधर छिपे कोनों की झुरमुटें इस बात की प्रतीक्षा करती हैं कि कब वहाँ दो प्रेमी आकर प्रेम-रस की बातें करें !

आज भी ऐसे वनस्थानों में छिटकी चन्द्र-ज्योत्स्ना उन मालती पुष्पों के एक चुम्बन के समान है जिसमें जीवन का गंभीर संदेश निहित है—परन्तु इस रहस्य को जो समझ पाते हैं वे पचास वर्ष से नीचे की अवस्था वाले हैं।

पर शोक की बात है कि युवक अनुभवहीन है और साथ ही कामनामय है। अतः यह आवश्यक है कि वृद्ध तो घर का निरीक्षण करें, गृहस्थ का आधिपत्य स्वीकार करें और युवक तथा युवतियाँ वन-छायाओं की मानवहीन शान्ति में अपना जीवन-यापन कर प्रेम के कठोरतम् अनुशासन को जान लें।

छोटी-छोटी बातों पर जहाँ उत्पात होता है वहाँ मेरे गीतों का मूल्य नहीं

मेरे गीतो ! तुम्हारे लिए बाजार कहाँ है ? क्या वह बाज़ार वहाँ है जहाँ शिक्षित समाज ग्रीष्म की शीतल पवन को सूँघनी से दूषित कर देता है, जहाँ मानव समाज केवल यह जानने के लिए कि तेल का आधार पात्र है अथवा पात्र का आधार तेल है—विवादयुक्त हो उठता है, जहाँ पीली हस्तलिखित प्रतियों पर जीवन की क्षुद्रता भौं सिकोड़ती है ?—तब ऐसे समय ही मेरा गीत अनायास कराह उठता है—अरे नहीं ! अरे नहीं ! अरे नहीं !

मेरे गीत ! तुम्हारे लिए बाजार कहाँ है ? क्या वह वहाँ है जहाँ भाग्यशाली पुरुष गौरव के शिखर पर पहुँचकर गर्वयुक्त हो जाता है, महलों में रहने पर अपनी पुस्तकों को चर्म में लपेट कर ताक में रख देता है, पुस्तकों पर सुनहरी चित्रकारी कर—उन्हें दासों से झड़वाता है और उस पुस्तक के अछूत एवं कौमार्य पत्रों को एक ऐसे देवता को समर्पित कर देता है जिसे समझना बड़ा कठिन है ?—ऐसी बात सुनकर तो मेरे गीत हांफने लगते हैं और कहने लगते हैं—अरे नहीं ! नहीं, नहीं !

मेरे गीतों ! कहाँ तुम्हारा मूल्य लग सकता है ? क्या उस स्थान पर तुम्हारा मूल्यांकन हो सकेगा जहाँ युवा-विद्यार्थी

पुस्तक पढ़ने बैठते हैं पर सिर पुस्तकों पर रख लेते हैं और यौवन के मादक स्वप्न-लोक में विचरने लगते हैं ? क्या वहाँ मेरे गीतों का मूल्यांकन होगा जहाँ विद्यार्थी अपनी गद्य पुस्तकों को तो मेज के एक कोने पर फेंक देते हैं पर कविता-कामिनि को सदैव अपने हृदय में छिपाये रहते हैं ? मेरे गीत ! क्या ऐसी धूलि-धूसरित अव्यवस्था में तुम आँख-मिचौनी खेलना पसन्द करोगे ?

मेरे गीतो ! तुम कहाँ बिक सकते हो ? क्या तुम वहाँ बिकना पसंद करोगे जहाँ वधु केवल गृह-कार्य में व्यस्त रहती है अथवा जहाँ गृह-कर्मों से शीघ्र निवृत हो नवेली अपने सुगंध-युक्त केशों सहित शयन-कक्ष की ओर दौड़ती है और तकिये के नीचे से किसी 'प्रणय-पुस्तक' को निकाल कर पढ़ने लगती है—वास्तव में ऐसी पुस्तक जो यदि किसी शिशु के हाथ में पड़ जाए तो अस्तव्यस्त हो जाए। अतः ऐसे प्रश्नों के उत्तर में मेरा गीत वेदनामय हो एक दुःख की साँस खींचता है और किसी अनिश्चित इच्छा से प्रेरित हो काँपने लगता है।

मेरे गीत ! तेरे इच्छुक कहाँ मिल सकते हैं ? क्या वे वहाँ मिल सकते हैं जहाँ समाज चिड़ियों के छोटे-छोटे गीतों को भी सुनता है, जहाँ झरनों की झरझर में पूर्ण ज्ञान और विवेक की बातें सुनाई पड़ती हैं, जहाँ संसार की वीणा के तार अपने समस्त संगीत को प्रेमी-हृदयों पर न्योछावर कर देते हैं ? हाँ, मैं सच कहता हूँ—ऐसे प्रश्नों के उत्तर में मेरा गीत हँस देता है और कहता है—

'हाँ ! हाँ ! हाँ !'

प्रणय ! तुम्हारी हँसी तुम्हारी आन्तरिक व्यथा की अभिव्यक्ति है

मेरे अनुराग ! मेरे प्रेम ! मुझे तो ऐसा जान पड़ता है मानो जीवन-उषा के उदय होने से पूर्व ही तुम किन्हीं आनन्द-युक्त सपनों के निर्झर में खड़े थे और अपने रक्त में उसके वेग का अनुभव कर रहे थे।

अथवा—कभी-कभी मैं यह भी सोचने लगता हूँ कि तुम्हारा मार्ग ईश्वरीय उद्यानों के मध्य से निकलता होगा—जहाँ चमेली, कमलनि और गैंदा के पुष्प ढेरों की संख्या में प्रफुल्लित होकर तुम्हारी गोद में गिर जाते होंगे और तुम्हारे हृदय में प्रवेश पाते ही अशान्त हो जाते होंगे।

क्या तुम्हें मालूम है, मेरे प्रेम !—तुम्हारी हँसी स्वयं एक गीत है जिसके शब्द तरंगों की चीत्कार में विलीन हो जाते हैं ? क्या अन्जान पुष्पों की सुगन्ध तुम्हारे मनोविनोद से भिन्न है, प्रेम ? छिपने को दौड़ती है तो तुम्हारी मुस्कान चन्द्र-ज्योत्स्ना के समान तुम्हारे मृदुल अधरों की खिड़की पर अपने को बिखेर देती है ? मैं तो अकारण ही तुमसे पूछ बैठता हूँ क्योंकि कारण को मैं स्वयं नहीं जानता। बस मैं तो केवल इतना जानता हूँ कि—तुम्हारी हँसी तुम्हारी आन्तरिक वेदना की उथल-पुथल है, तुम्हारे जीवन का आन्तरिक वेग है।

मैं तो एक नटखट ग्वाल-बाल होना चाहता हूँ

क्या संस्कृति का गर्व छोटा होता है ? उसके लिए मैं तो मरना भी पसन्द करूँगा—हाँ ! यदि निकट भविष्य में—वृन्दावन में—मैं एक ग्वाल-बाल के रूप में पैदा हो जाऊँ।

मैं तो एक ऐसा नटखट ग्वाल-बाल होना चाहता हूँ जो स्वयं तो वट-वृक्ष के नीचे बैठकर 'गूँजा पुष्पों' का हार बनाये पर गैयों को स्वतन्त्र चरने के लिए छोड़ दे। ग्वाल-बाल होकर मैं कुछ नहीं करना चाहता। मैं तो केवल इतना ही सोचता हूँ कि जमुना की गहन और शीतल धारा में गोते लगाया करूँ।

वास्तव में, मैं तो उस हृदय का आनन्द अनुभव करता हूँ जब वह ग्वाला उषा की बेला में अपने मित्रों को पुकार-पुकार कर जगाता है। उस समय का दृश्य भी कितना सुन्दर है जब गृहणियाँ अपनी दूध-बिलौनी के शब्द से सारी गली में शोर मचा देती हैं, गाँव के पशु अपने पैरों की रौंद से धूल के बादल उड़ा देते हैं और कुमारी बालायें अपनी गैयों को दूहने के लिए आंगन में निकल आती हैं।

जैसे-जैसे सूर्यदेव अस्ताचल की ओर चलने लगते हैं वैसे ही वैसे तमाल वृक्षों के नीचे छाया गहन होती जाती है और गो-धूलि जमुना के किनारों पर बिखर-बिखर जाती है। जब दूध-वालियाँ जमुना की रौरवमय अथाह धाराओं को पार करती हैं

तो वे बेचारी भयभीत होकर काँपने भी लगती हैं और साथ ही आनन्दमग्न हो जब मोर अपने पंखों को फैलाकर नाचने लगते हैं तो वह नटखट ग्रीष्म के बादलों की ओर देखने लगता है।

खिले हुए पुष्प के समान जब वैसाख की रात्रि मृदुल बन जाती है—तो क्या कहूँ—वह नटखट मयूर-पंख को अपने केशों में लगाकर न जाने कहाँ लुप्त हो जाता है। वृक्षों की शाखाओं में बँधे झूलों की रस्सियों में पुष्प गुंथे हुए हैं। इन्हीं झूलों पर झूलने के लिए ग्वाले नीली नदियों की कछार में आ जाते हैं और दक्षिण वायु के संगीत के साथ लम्बे-लम्बे झोटे लेने आरम्भ कर देते हैं।

नवीन बंगाल के नवयुग में जन्मित, मेरे भाइयो! मुझसे तुम नेता बनने के लिए न कहना। ध्यान रखो या न रखो—पर मैं अन्धकार में पड़े समाज के लिए संस्कृति का दीप जलाने का कष्ट भी न करूँगा। मैं तो बस इतना ही इच्छुक हूँ कि—काश! मैं वृन्दावन के किसी गाँव में 'अशोक' की सघन छाया में जन्मित हुआ होता जहाँ आज भी नव-कुमारी कन्याएँ अपने दूध-दही को बिलोती हैं।

प्रेम एक है। रहस्य दो हैं—एक तुम्हारा और दूसरा मेरा

मैं जमुना के उस रेतीले तट को प्यार करता था जहाँ एकाकी तलैया में बत्तखें चीत्कार किया करती थीं और कछुए किनारों पर आकर सूर्यस्नान किया करते थे। वे स्थान मुझे प्रिय हैं जहाँ संध्या में मछली पकड़ने वाली नावें लम्बी घास की सघन छाया में आकर विश्राम करती थीं।

तुम भी तो नदिया के उस तट को प्यार करते थे जो सघन वृक्षों एवं फूल-पत्तियों से ढका होता था और जहाँ उन सबकी परछाईं बाँसों के वन की गोद में आकर बैठ जाती थी।

मुझे याद है तुम उस अलबेले तट को प्यार करते थे जहाँ स्त्रियाँ पानी भरने के लिए अपनी-अपनी 'मटकियाँ' साथ लेकर एक चक्कर-मार्ग से आती थीं।

वही प्रेम-नद हम दोनों के मध्य भी बहती थी और वही गीत गुनगुनाती थी—जो वह अपने कूलों के प्रति गुनगुनाती थी। मैंने भी उस गीत को सुनने का प्रयत्न किया था—उस समय—जब मैं अकेला तारों की छांह में जमुना की रेती पर पड़ा हुआ था। मुझे ज्ञात है—तुमने भी तो वही गीत उषा के सुनहरे प्रकाश में तट के ढाल पर बैठकर सुना था। तुमने उन शब्दों को नहीं सुना जो केवल मैंने सुने थे, पर हाँ! वह रहस्य जो उसने तुमसे कह दिया है—वही सदैव के लिए मेरा रहस्य भी बन गया है और कदाचित् जीवन-पर्यन्त उसे नहीं जान पाऊँगा।

बताओ ! ऐसे पाना चाहती हो अपने भाग्य-देवता को

अपने घूँघट—आंचल को किंचित् हटाकर तथा अधखुली खिड़की पर खड़ी होकर तुम किस चूड़ी बेचने वाले की प्रतीक्षा कर रही हो ? जिस सड़क पर धूल उड़ती है उस पर काठ की भारी-भारी गाड़ियों को रेंगते तुम देख रही हो अथवा दूर—नदिया की तरंगों पर तैर रही नावों को देख रही हो—जिनके मस्तूल क्षितिज को छूते प्रतीत हो रहे हैं ?

तुम्हारे लिए तो संसार उस बूढ़ी स्त्री के समान होगा जो चरखे पर बैठी सूत कात रही है और कातते-कातते न जाने क्या-क्या गुनगुना रही है। उसकी गुनगुनाहट में अनर्थक लय है—जो एकाएक अनन्त विचारों की छायाओं से भर जाती है।

पर कौन जानता है कि वह अनोखा चूड़ीवाला अपनी रंग-बिरंगी चूड़ियों को बगल में दबाये ऐसी दोपहरी में, इस मार्ग से निकलेगा भी या नहीं ? हाँ ! वह तुम्हारे द्वारे पर एक आवाज देगा और तुम खट से अपनी खिड़की खोल दोगी, घूंघट उतार फेंकोगी और अपने धुंधले सपनों से निकलकर अपने भाग्य-देवता को पा लोगी।

यद्यपि बड़ी अटपटी हो और मुझसे दूर भागने वाली हो

अचानक जैसे ही मैंने तुम्हारे केशों को पकड़ा मेरा हृदय न जाने क्यों तुम्हारी काली अंखियों में डूबने लगा। मैं तुम्हें पाकर भी तुम्हें खोजने लगा क्योंकि वह तुम्हीं तो हो जो अपने शब्दों की शान्ति से मुझे टालती रहीं---और जिसने अपने मौन शब्दों से मुझे टाला---हमेशा ही टाला।

किन्तु फिर भी मैं तो जानता हूँ कि मुझे अपने प्रेम से जैसा भी वह है, संतुष्ट रहना चाहिए यद्यपि मुझे यह भी ज्ञात है---जिससे मैं प्रेम करता हूँ वह बड़ी अटपटी और मुझसे दूर भागने वाली है।

चूँकि, इस बीच मार्ग पर हम एक दूसरे से मिल गये हैं, अत: इसी मिलन के क्षण का सहारा पाकर मैं पूछ लूँ क्या? क्या मुझमें इतनी शक्ति है कि संसार के मार्ग पर लगी भीड़ के कोहरे से तुम्हें निष्कंटक निकाल ले जाऊँ?

क्या एक बात और पूछ लूँ तुमसे?---क्या मेरे पास इतना भोजन है कि इस काली रात्रि के समान राह पर खड़ी मृत्यु से बचाकर तुम्हें जीवित रख सकूँ?

अंधकार ही पसंद है तो अंधकार में बैठकर ही मेरा गीत सुनो

दैवयोग से यदि मेरे संबंध में कुछ सोचो, तो अनुभव करोगी कि कभी न कभी तो तुम्हारे लिए गीत गाऊँगा ही---पर उस समय जब बरसाती संध्या की छाया नदिया की चादर पर आकर बैठ जायेगी और सूर्य अपने धुंधले प्रकाश को पीछे छोड़ देगा। मैं तुम्हें उस समय गीत सुनाऊँगा जब काम करने अथवा खेलने के लिए दिन लगभग समाप्त हो चुकेगा।

दक्षिण वाली अट्टालिका में जब तुम अकेली ही बैठी होगी तब मैं स्वयं को अंधकारमय कमरे में रखकर तुम्हें गीत सुनाऊँगा। किन्तु जैसे जैसे अंधियारी बढ़ती जायेगी वैसे-ही-वैसे भीगी पत्तियों की सुगंध खिड़की द्वारा तुम्हारे पास चली आयेगी। तभी नारियल-वृक्षों के झुँड भी तूफानी हवाओं के चलने पर चीत्कार करने लगेंगे और तब उनका दुःखमय रुदन भी तुम सुन सकोगी।

पर जैसे ही कोई प्रदीप्त दीपक तुम्हारे कमरे में आया नहीं कि मैं यहाँ से चला जाऊँगा और तब तुम एकाकी रहकर सूने कमरे में रात्रि से बातें करना और मेरे शान्त होने पर मेरे गीत सुनना।

सब कुछ तो तुम्हें समर्पित है ! अब है ही क्या अवशेष मेरे पास ?

मेरे पास जो कुछ भी थोड़ा-बहुत है वह सभी-कुछ मैंने अपनी गोदी में भर तुम्हें समर्पित कर दिया है। अब मेरे पास, वास्तव में, रह ही क्या गया है ? मैं और क्या दे दूँ तुम्हें, और तुमसे मैंने बचा ही क्या लिया है ?

आश्चर्य न करूँ तो क्या करूँ ?—क्योंकि मुझे ध्यान है कि मेरे पास कुछ भी तो नहीं है ? कल तुम्हारे चरणों की भेंट के लिए क्या ला पाऊँगा ?

अब तो मैं अपनी तुलना उस वृक्ष से करने लगा हूँ जिसकी बसंत पुष्पों से भरी गोदी ग्रीष्म के अन्त में खाली हो जाती है। अब तो मैं केवल उस विरही वृक्ष के समान हूँ जो संगहीन—बेचारा ! अपनी पुष्प-विहीन एवं उजड़ी डालों को किंचित् ऊपर उठा बस आकाश की ओर एकटक देखता रहता है। तुम्हें क्या मालूम वह क्यों देखता है ?

क्या तुमसे पूछ लूँ ? क्या उन सब भेंटों में जो मैंने तुम्हें अब तक अर्पित कीं—एक भी पुष्प ऐसा न निकला जिसे अपनी शाश्वत् अश्रु-बिंदु से मैंने इतना मोह लिया हो कि वह कभी न कुम्हलाये ?

क्या मैं तुमसे आशा करूँ कि तुम मुझे याद रख सकोगी ? बसंत के अन्त में अपने खाली हाथों की झोली फैला-

कर मैं तुम्हारे पास आ····आऊँगा और तुमसे कहूँगा—'अब मैं तुम्हें छोड़कर जा रहा हूँ।'

तब क्या तुम अपने नेत्रों को झुकाकर मेरे प्रति कृतज्ञता भी प्रकट न कर सकोगी ?

एक शान्त संसार अग्नि की ज्वाला में जल रहा है पर जीवित है

मैंने उसे स्वप्न में देखा था। वह मेरे ही समीप बैठी अपनी कोमल अंगुलियों से मेरे केशों को कुरेद रही थी। ऐसा अनुभव होता था मानो वह किसी वाद्य-यंत्र के तारों पर अपनी अंगुलियाँ चलाकर गीत निकालने का प्रयत्न कर रही हो। तब मैं उसके मुख की ओर देखने लगा और न जाने क्यों अपने आँसू न रोक पाया। मैं कुछ भी न कह पाया, पर तिस पर भी, मेरी वेदना ने मेरी निंदिया को तोड़ दिया और वह ऐसे टूट गई जैसे कोई बबूला अपने आप टूट जाता है।

मैं उठ बैठा और मैंने अपनी खिड़की से देखा कि तारों के समूहों से बना दूधिया-मार्ग बहा जा रहा है। दूधिया-मार्ग नहीं! एक शान्त संसार अग्नि की ज्वाला से जल तो रहा है पर फिर भी बहा जा रहा है। इस पर मैं आश्चर्य किये बिना न रह सका और मैं तुरन्त सोचने लगा---'कितना अच्छा होता यदि वह भी ऐसा ही स्वप्न देखती जैसा मैंने देखा है।'

जीवन की इस निराशा में क्या तो तुमसे कह दूं और क्या तुम समझ सकोगी

उस घास के मैदान के पास जैसे ही हम दोनों ने एक दूसरे के नयनों को देखा, वैसे ही, मुझे ध्यान आया कि मुझे उससे कुछ कहना है। पर वह तो मुझसे बिना कुछ कहे-सुने ही चली गई और 'वह शब्द' जो उसके पास तक मुझे पहुँचाना था—वही न पहुँचने की अवस्था में प्रत्येक पल की प्रत्येक लहर से ऐसे ही टकराने लगा जैसे कोई भाग्यहीन नौका रात-दिन किसी पत्थर की चट्टान से टकराती रहती है। उसके चले जाने के पश्चात् मुझे ऐसा लगा मानो मैं, पतझड़ के बादलों में, किसी की अनन्त खोज के लिए घूम रहा हूँ—अथवा कभी-कभी संध्या समय किसी पुष्प का प्रफुल्लन मैं स्वयं बन जाता हूँ, केवल यह देखने के लिए कि वह कौनसा क्षण है जिसे सूर्यास्त खो देता है।

किन्तु मैं कैसे भूल जाऊँगा!—वही खोया हुआ क्षण मेरे हृदय में जुगनू के समान चमकता रहता है। पर ऐसा क्यों?—केवल यह जानने के लिए कि निराश जीवन की धुंधली गोधूलि में 'उस शब्द' का अर्थ क्या है जो मैं तुमसे कहना चाहता हूँ।

अव्यक्त प्रेम की तीक्ष्ण वेदना से ही तो बसंत के पुष्प खिलते हैं

अव्यक्त प्रेम की तीक्ष्ण वेदना जैसे व्यक्त हो जाती है वैसे ही बसंत-पुष्प कलियों से निकल कर फूट पड़ते हैं। इन्हीं बसंत-पुष्पों की सुगन्ध पाकर मुझे अपने गत्-जीवन के बीते गीतों की याद आ जाती है। तब मुझे प्रतीत होता है मानो इच्छाओं की पत्तियाँ मेरे हृदय में उग आई हैं।

मेरा प्रणय, मेरे समीप नहीं आया, फिर भी उसका शिथिल स्वर्ग मेरे पास है—मुझ में स्थित है। उसकी बोली अभी भी इन हरे-भरे सुगंधित खेतों से गूँज रही है। उसका एकटक हो मेरी ओर देखना—अभी भी निराशा की वेदना से त्रस्त-आकाश में दीख पड़ता है—पर उसके मनमोहक नयन कहाँ हैं?

उसके चुम्बन अभी भी भूमंडल की वायु में छिटक रहे हैं, पर उसके मधुमय अधर कहाँ हैं?

वह मेरा साथ छोड़ गई पर मेरा प्रेम अब भी मेरे साथ है*

मेरे पुष्प दूध, मधु और मदिरा के समान थे। मैंने उन सब को इकट्ठा कर एक सुनहरी फीते से बाँधा था—पर तिस पर भी, न जाने कैसे वे मेरी दृष्टि से बच गये, इधर-उधर भाग गये और मेरे पास केवल····केवल वह फीता रह गया।

मेरे गीत दूध, मधु और मदिरा के समान थे। मैंने उन्हें अपने हृदय की गति से बाँध रखा था। परन्तु, उन्होंने तो अपने पंख फैला दिये और मुझसे दूर भाग गये। तब मेरे पास नीरस समय के केवल प्रियतम पल शेष रह गये और उन्हीं के साथ मेरा हृदय शान्ति में स्पंदित होने लगा।

समझ लो! जिस सौन्दर्य को मैं प्रेम करता था, वह भी दुग्ध, मधु और मदिरा के समान था। उस सुन्दरी के अधर उषा की बेला में खिले गुलाबी पुष्पों के समान थे—और उसके नयन मधुमक्खी के समान काले थे। मुझे ज्ञात था कि—यदि मैंने अपने हृदय को अशान्त हो जाने दिया तो वह बेचारी मेरे दुःख से त्रस्त हो उठेगी। अतः मैंने अपने हृदय को शान्त ही रखा। मैं सदैव अंजाना बना रहा पर उसने मुझे फिर भी धोखा दिया और मुझे छोड़ दिया, वैसे ही उसने भी मुझे धोखा दिया और वह भी मुझे छोड़ कर चली गई। इस संसार में अब मैं अकेला ही हूँ और केवल मेरा प्रेम ही मेरे पास अवशेष है।

*श्री सत्येन्द्रनाथ दत्ता की बंगला से अनुदित।

जब तुम मुझे उपहार दो, तो सुख न देना। मैं तो दुःख का पुजारी हूँ

कितनी ही बार ऐसा हुआ कि बसन्त-दिवस आ-आकर हमारे द्वार पर खटखटा गया। मैं अपने कार्य में व्यस्त रहा, नहीं समझ में आता तुमने क्यों न उसे उत्तर दिया ? अब जब कि मैं बस एकाकी हूँ और क्षयरोग से ग्रस्त हूँ, वह बसंत दिवस आता है पर मैं अपने द्वार से उसे लौटा देने में असमर्थ हूँ।

यदि बसंत-दिवस इस विचार को लेकर आया कि मुझे आनन्द-मुकुट पहना दे और फिर चला जाये तो बस तभी उस विचार से पहले मेरा द्वार बन्द था।

पर अब, जब भी वह दुःख की भेंट हमें अर्पित करने आता है—अपना मार्ग खुला पाता है।

मैं चाहता हूँ–मैं अकेला ही रहूँ। कोई रहने ही नहीं देता

एक बार नटखट बसन्त अपनी मतवाली हँसी को लेकर मेरे जीवन में आया। मेरे जीवन में पदार्पण करते ही उसने जीवन के सूखे गुलाब-पुष्पों को प्रफुल्लित बना दिया और साथ ही, नवीन अशोक की पत्तियों को अपने लाल चुम्बनों से ऐसा रंगा कि समस्त आकाश जलता हुआ दीख पड़ने लगा।

वही बसन्त मेरे एकाकी जीवन में किसी निर्जन गली से घुस आया है। अपनी गहन शान्ति की विचारवान छाया को लेकर वह मेरी मुंडेर पर आ बैठा है और वहीं बैठा हुआ कहीं दूर खेतों के पार झाँक रहा है–जहाँ पर पृथ्वी की हरियाली आकाश-देव की पीत काया को देखकर पहले तो अशक्त बन गई और फिर चेतनाहीन हो गई।

दूसरी माला बना दूँगा, पर प्रतीक्षा तो करो न, नटखट !

अन्तिम विदाई के समय आकाश में नीचे लटके बादलों की भाँति मैं कुछ अस्थिर-सा था। उस समय मेरे पास केवल इतना ही समय था कि एक लाल कलावा, अपने कंपित हाथों से उसकी कलाई में बाँध दूँ। खिले हुए महुआ-पुष्पों को देखकर जी में आ ही जाता है कि चुपचाप कहीं उन्हीं के समीप घास में बैठ जाऊँ और यह सोचा करूँ—'क्या तुमने अपनी नरम कलाई में मेरा 'लाल डोरा' अब भी बाँध रखा है।

तुम उस तंग-मार्ग से निकल कर गईं। तुम्हारे जाने से सन के खिले हुए खेत बिखर गये। उस समय मैंने देखा कि मेरी जल्दी में बनी माला ढीली होकर तुम्हारे केशों से लटक रही है। पर तुम इतनी अटपटी क्यों हो गई हो? तुमने इतनी भी प्रतीक्षा न की कि दूसरी उषा के आने तक मैं तुम्हारे लिए फिर से नये-नये पुष्प संचित करूँ और एक दूसरी माला बनाकर अन्तिम भेंट के रूप में तुम्हें दे दूँ। मैं विस्मित हूँ यह जानकर कि यदि तुम्हें ध्यान न रहा तो तुम अवश्य ही मेरी भेंट की हुई माला को गिरा दोगी अपने केशों से।

क्या तुम्हें याद है—मैं निशि-दिन तुम्हें गीत सुनाया करता था? तुम्हें अब उन दिनों की स्मृति क्यों होगी? वह तुम्हीं तो हो, जो मेरे अन्तिम गीत को, जाते समय अपने कंठ में रख ले

गई थीं। तुम तो बड़ी वैसी हो न ! तुम एक बार भी मेरे उस अनसुने गीत को सुनने के लिए नहीं रुकीं---हाँ उस गीत को सुनने के लिए जो मैंने केवल तुम्हारे लिए बनाया था और जिसे मैं तुम्हें सदैव ही सुनाना चाहता था।

मैं आश्चर्य-चकित हो तुमसे पूछता हूं क्या तुम उस गीत से थक गई हो---जिसे तुम अपनी ही इच्छा से इस हरे खेत को पार करते समय, गनगुनाती रहती हो ?

सच्चा प्रेमिल-हृदय रखने वाली प्रेमिका स्वप्न को नहीं भेजती

पिछली ही रात्रि की तो बात है। बादल बुरी तरह गरज रहे थे और 'अमालक की शाखायें' तूफानी हवाओं के पंजे में रहकर भी अपने जीवन के लिए युद्ध कर रही थीं।

उसी समय मेरे मन में एक बात आई और वह यह—यदि स्वप्नों को ही मेरे पास आना है तो वे साक्षात् मेरी प्रेमिका के रूप में ही मेरे समीप आयें। मुझे विश्वास है, यद्यपि रात्रि निर्जन है और वर्षा घमासान है पर फिर भी स्वप्न, स्वप्न के रूप में नहीं वरन् साक्षात् प्रेमिका के रूप में ही आवेंगे।

संसार की पवन कराह रही है। आँसुओं से दूषित होकर उषा के गाल पीले पड़ गये हैं चूँकि सत्य अप्राप्य है। मुझे ऐसा लगा है कि मेरे स्वप्न भी सत्यहीन एवं नीरस हैं। उन्हें अतीत की वस्तु बन जाने में कितनी देर लगती है।

गत रात्रि को जब काली अंधियारी ने वेगवती पवन की मदिरा पी रखी थी, तब निशा के अवगुंठन के समान वर्षावली को हवाओं ने चिथड़े-चिथड़े करके फेंक दिया। क्यों तुम नहीं विश्वास करते कि नक्षत्रहीन रात्रि में भी भयंकर वर्षा का रौद्र-रूप देखने को मिल सकता है?

क्या सत्य मुझसे ईर्ष्या करेगा--और उस समय--जब असत्य--नक्षत्रहीन रात्रि में---गरजते हुए मेघों के साथ--मेरी प्रेमिका के रूप में मेरे समीप आ जाये ?

जीवन-बंधन में प्रेम है—संगीत है और जीवन साथी के सच्चे दर्शन हैं

मेरी शृंखलाओ ! मेरे हृदय में गीत उत्पन्न करने का श्रेय एवं सौभाग्य केवल तुम्हें है। क्या तुम्हें ज्ञात है ?—मैं दिन भर तुम्हारे साथ केलि करता हूँ और मैंने केवल तुम्हीं को अपना भूषण बना लिया है।

मेरी शृंखलाओ ! मेरे अच्छे मित्र होने का श्रेय यदि किसी को है तो वह केवल तुम्हें है। समय बीत गया। पर एक समय था मुझे याद है—'मैं तुमसे डरता था।' पर वही डर था जो मुझे तुमसे अधिक से अधिक प्रेम करने के लिए उत्साहित करता था। क्या तुम्हें याद है ?—यदि मेरे जीवन की काली अँधियारी में मेरा कोई जीवन-साथी था तो वह केवल तुम थीं।

मैं तुमसे इतना प्रभावित हूँ—मेरे 'जीवन-बंधन' !—कि अन्तिम नमस्कार से पूर्व ही तुम्हारे स्वागत में अपना शीश नवाता हूँ।

स्वतंत्रता के लिए आत्म-विनाश भी सहर्ष स्वीकार करो

देखो मेरी नौका ! तुमने कितनी ही बार पतवार को तोड़ा और अब तुमने अपनी पाल को भी तोड़ दिया। तुम कभी इस बात की चिन्ता ही नहीं करतीं कि—आगे न जाने क्या हो जाए और तत्काल बीच सागर की ओर चल देती हो। तुम्हें तो ध्यान रहता ही नहीं, और तुम्हारे साथ तुम्हें रोकने वाला लंगर भी घिसटता चला जाता है। परन्तु अब तुम्हारे इस काष्ठ-शरीर में छिद्र बढ़ गया है और तुम अपनी यात्रा समाप्त कर निद्रा की गोद में सो जाओ और किनारे के पानी को शोर मचाने दो।

दुःख की बात है !—मैं जान गया हूँ कि तुम्हें चेतावनी देना व्यर्थ है। अवगुण्ठन में छिपी काली मृत्यु से तुम तो बहुत जल्दी आकर्षित हो जाती हो। तुम्हें नहीं मालूम कि तूफानी हवाओं का पागलपन और सागर की आक्रांत लहरें—दोनों ही तुम्हारे ऊपर सवार हैं। ज्वार का संगीत ऊँचे से ऊँचा आलाप ले रहा है। जीवन के भयंकर नृत्य से तुम्हें ज्वर आ गया है। अतः तुम कंपित हो।

जब तुम में इतना साहस है कि कठिनतम् जीवन से टक्कर ले सकती हो तो मैं कहूँगा—मेरी जीवन-नौका ! तुम अपनी परतन्त्रता रूपी श्रृंखला को तोड़ दो और स्वतन्त्र बन जाओ तथा भयहीन होकर अपने विनाश को भी आत्मोत्सर्ग के रूप में सहर्ष स्वीकार कर लो।

पुष्प भी जलते हैं और चिड़ियाँ भी गीतों में अपने को खो देती हैं

अपनी यौवनावस्था में जिस धारा में मुझे बहना पड़ा वह बहुत ही तीव्र और कठोर थी। उस समय बसंत का पवन स्वयं ही अधिक खर्चीला था—वृक्षों में फूलों ने ज्वाला जला रखी थी और चिड़ियाँ अपने गीतों में इतनी खोई रहती थीं कि अपनी निद्रा को भी भूल जाती थीं।

यद्यपि ऐसी अवस्था में, मैं स्वयं भी तीव्र गति से चला पर कामनाओं की वेगवती बाढ़ ने मुझे हरा दिया। उस समय मेरे पास संसार को देखने, उसे अनुभूत करने और उसे अपने में आत्मसात् करने का अवसर न था।

पर हाँ! अब मुझे अवसर मिल रहा है—क्योंकि मेरे यौवन का ज्वार उतर गया है, मुझे किनारे पर ही रोक दिया है, अतः अब संसार की प्रत्येक वस्तु का गम्भीरतम् संगीत सुन लेने के मैं योग्य हूँ।

इस यौवन के बीत जाने पर, अब तो आकाश ने भी अपने नक्षत्रमय हृदय को मेरे लिए खोल दिया है।

वह 'चितेरा' बड़ा चतुर है जो छिपकर हमारी सब बातों को देख लेता है

कोई छिपकर मुझे देखा करता है, तभी तो कोई मेरे नयनों के पीछे बैठा रहता है। ऐसा जान पड़ता है कि वह युगों से ऐसे ही देखता आया है। संसार को उसने उस छोर पर खड़े होकर देखा है जहाँ स्मृति का केवल अंतिम तट होता है।

उन दृश्यों को जिन्हें वह भूल जाता है वह भी घास पर आकर चमकते हैं और पत्तियों पर आकर काँपने लगते हैं। वह चितेरा तो इतना चतुर है कि अपनी प्रेमिका के अवगुण्ठित मुख को भी देख लेता है—पर उसी समय देखता है जब कोई अन्जान सितारे गोधूलि में आकर चमकने लगते हैं। क्या तुम नहीं देखते ? यही कारण है। तभी तो आकाश मिलन और वियोग की अनन्त वेदनाओं से त्रसित होकर दुःख में छटपटा रहा है।

क्या तुम नहीं अनुभव करते ! —केवल उसी की कामना बसंत के समीर में विराजमान है और वही एक कामना ऐसी है जो युगों की उन अनन्त कहानियों से भरी हुई है जिनका कोई आदि नहीं है।

मुझे पाने के लिए तुम्हें अपने को छोड़ना होगा

मेरे यौवन के गत जीवन से एक संदेश आया था जिसका आशय इस प्रकार था—"मैं मई मास के उस कम्पन में तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूं जहाँ पर मुस्कानें आँसुओं के लिए उद्वेलित हैं और जहाँ पर समय उन गीतों को पाकर तड़पता है जो अभी तक गाये नहीं गये हैं।"

वह संदेश बराबर यही कहता चला जा रहा है—"समय और वृद्धावस्था के बीहड़ पथ को पार कर मृत्यु के द्वार से निकलो और मेरे समीप आओ। मैं क्यों तुम्हें अपने पास बुलाता हूँ—क्या तुम जानते हो?—इसलिए कि स्वप्न मुर्झा जाते हैं, आशायें निराश हो जाती हैं और परिश्रम से इकट्ठा किया हुआ धन सूखे हुए फल के समान लुप्त हो जाता है।

देखो! मुझी में तुम शाश्वत् सत्य के दर्शन करो। मैं ही वह अन्नत सत्य हूँ जिसे अपनी जीवन-यात्रा में तुम्हें बार-बार पाना होगा।

मुझसे मिलने के लिए और मेरे दर्शनों के लिए तुम्हें अपने जीवन-तट को छोड़कर आना होगा—बार बार आना होगा। समझे!

उसका रोना मेरे हृदय में रो-रोकर मुझसे कुछ कहता है

नव कुमारियाँ अपने-अपने घरों से नदी की ओर चल दी हैं। वे पानी भरने के लिए जा रहीं हैं। उनकी पारस्परिक हँसी मुझे वृक्षों के पीछे से सुनाई पड़ रही है। मेरी अपनी भी यही इच्छा है कि मैं भी पानी लेने के लिए उन्हीं के साथ नदी पर जाऊँ।

जब वे नदी की ओर जा रही होंगी, तब उन्हें वृक्षों की छायाओं के नीचे बकरियाँ चरती हुई दीख पड़ेंगी और गिलहरियाँ गिरे हुए पत्तों पर दौड़कर धूप से छाया की ओर लुप्त होती दीख पड़ेंगी।

मेरी दिनचर्या समाप्त हो चुकी है। मेरे कलसे भरे हुए हैं। तब मैं क्या करूँ? अतः मैं अपने द्वार पर खड़ा हुआ 'एरिका' की चमकती हुई पत्तियों को देख रहा हूँ।—और अपने ही द्वार पर खड़ा मैं उन स्त्रियों की हँसी को सुन रहा हूँ जो नदी से पानी लेने जा रही हैं। वे एक दूसरे से हँसी करती हुई जा रही हैं—यह मुझे मालूम है।

अपने नित्यप्रति के जीवन में, नदिया से अपने कलसों में पानी भरकर लाना मुझे प्रिय है। उससे भी अधिक सुख मुझे तब होता है, जब मैं ओस में डूबी हुई उषा-बेला में, कलसे लेकर पानी भरने जाता हूँ, अथवा उस समय जाता हूँ जब दिवस-

अवसान की अन्तिम किरण भी थककर बैठ जाती है।

जब कभी भी मेरा मस्तिष्क सुस्त-सा रहता है तभी नदिया की कलकल करती हुई धारा मुझसे तोतली बोली में बातें करने लगती है। पर जब भी वह मेरे प्रफुल्लित विचारों को जान लेती है तभी अपनी मंद हँसी में वह खो भी जाती है।

मुझे याद है—एक दिन मुझे दु:खी देखकर उससे रहा न गया और अपने नयनों में अश्रुजल भरकर वह सिसकियाँ भरने लगी। तब ही मुझे भी ऐसा लगा मानो मुझसे नहीं वरन् मेरे हृदय से रो-रोकर वह कुछ कह रही है।

मैं उसके पास उस समय भी जाता था जब वर्षा घुर्रा घुर्रा-कर आती थी और बतखों की उत्सुक कू-कू को पानी में डुबो देती थी।

मेरी दिनचर्या समाप्त हो चुकी है। मेरे कलसे भरे हुए हैं। पश्चिम में सूर्याभा पीली पड़ गई है—और छायाएँ अपने-अपने वृक्षों की गोद में आ-आकर बैठ गई हैं। तिल के पुष्पित और खिले हुए खेतों से सिसकियाँ निकल-निकलकर मेरे कानों में आ रही हैं, परन्तु मेरे नेत्र तो निरन्तर गाँव की उस 'गली' की ओर लगे हुए हैं 'जो' यमुना के तट तक पहुँचती है और जो गाँव की नारियों को पानी भरने के लिए अपने साथ नदी तक ले जाती है।

अपनी गहनता में स्मृति के खो जाने को विस्मृति कहते हैं

क्या तुम केवल एक चित्रस्वरूप हो ?——मैं तो तुम्हें आकाश के तारे और पृथ्वी की धूलि के समान सत्य समझता था। संसार की प्रत्येक वस्तु में आकाश और पृथ्वी का अस्तित्व स्थित है। किन्तु आश्चर्य ! तुम तो पूर्णतया एकाकी और चित्र-सम टँगी-सी दीख पड़ती हो।

दिवस की उष्ण उच्छ्वास में जब तुम मेरे साथ टहल रही थीं, तब, क्या तुम्हें याद है——तुम्हारे कोमल अंग-प्रत्यंग जीवन का संगीत अलाप रहे थे ? मेरा समस्त संसार जितना कुछ भी कह सकता है वह सब तुम्हारे मधुर कंठ में निहित है। तुम्हें नहीं मालूम——मेरा संसार तो तुम्हारे रूप द्वारा नित्य ही मेरे हृदय को छू लेता है। तुम न जाने कैसी हो !——एकाएक तमाल वृक्ष की छाया में रुक गईं और मुझे बिना साथी ही आगे बढ़ना पड़ा।

जीवन, एक छोटे बालक के समान, मृत्यु के आगमन नाद पर हँसने लगता है। वही जीवन जो एक छोटे बालक के समान निडर है मुझे आगे का मार्ग बता रहा है और मैं निरन्तर अदृश्य का अनुगामी बन आगे बढ़ने के लिए प्रयत्नशील हूँ।

जब मैं तुम्हें देखता हूँ तो बड़ी अनोखी-सी मालूम पड़ती हो। तुम वहीं खड़ी रह गईं——वहीं खड़ी हो——उस धूलि और

तारों के झुंड के पीछे---वहीं जहाँ तुम चित्र के समान टँगी खड़ी थीं।

नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, मुझे विश्वास है। यदि जीवन का वेग सहमकर तुम्हारे शरीर में रुक गया तो जान लो संसार की समस्त नदियाँ भी भयभीत होकर अपने जल की गति को बंद कर देंगी।

तुम्हारी जीवन-गति के बंद होने का अर्थ है---प्राची की उषा के सातों रंगों का पृथ्वी पर आ गिरना।

यदि तुम्हारे इन काले केशों की संध्या-सी रमक निशा की नीरव निराशा में खो गई तो जान लो---ग्रीष्म के वनों की साया अपने स्वप्नों को साथ लेकर मर जावेगी।

क्या यह कभी भी सत्य हो सकता है कि मैं तुम्हें भूल गया हूँ हम अपने चलने में इतनी जल्दी करते हैं कि मार्ग के तट पर लगी बेलों के पुष्पों को निश्चित से होकर भूलते चलते हैं। किन्तु पुष्प बेचारे कितने अच्छे हैं। वे तिस पर भी अपनी सुगंधि से हमारी विस्मृति को जागृत कर देते हैं और हमारी विस्मृतावस्था में ही अपने संगीत-तार को झनझना देते हैं।

मेरे संसार से निकलकर तुम मेरे जीवन की गहनतम् आधारशिला पर जाकर बैठ गई हो और इस प्रकार तुमने यह सिद्ध कर दिया कि---अपनी ही गहनता में स्मृति के खो जाने को विस्मृति कहते हैं।

अब तो तुमने जान लिया होगा कि मेरे गीत और तुम, दोनों ही एक हो। तुम मेरे समीप उस समय आईं थीं जब उषा की पहली किरण पृथ्वी पर उतरी थी।

मैंने उस समय तुम्हें खो दिया था जब संध्या ने गोधूलि को स्वर्ण समझकर फेंक दिया था।

उसी समय से---जब से तुम्हें खो चुका हूँ तब से आज तक अपने ही निशामय जीवन की काली अंधियारी में तुम्हें प्राप्त करने के लिए निरन्तर खोज कर रहा हूँ।

नहीं अब मैं जान गया हूँ कि चित्र के समान तुम निर्जीव नहीं! तुम तो वास्तव में सजीव हो।

तुम कितनी ही दूर खड़ी हो जाओ पर मैं तुम्हें देख सकता हूँ

तुम मृत्यु के द्वार से निकलकर आगे चली गई और पीछे भी कुछ छोड़ चलीं।—और वह है शाश्वत् की अनन्त वेदना जिसकी सिसकियों से मेरा जीवन त्रस्त है। तुम तो चली गई पर सूर्यास्त के धूमिल रंगों की चित्रछाया तुमने इस पृथ्वी पर छोड़ दी और उन्हीं धूमिल रंगों से तुमने मेरे विचारों के क्षितिज को रंग दिया। तुम्हें तो जाना था इसलिए चली गईं परन्तु पृथ्वी के उस पार प्रेम के स्वर्ग के लिए आँसुओं का एक मार्ग और बना गईं।

तुम्हारी भुजाओं का बंधन एक वैवाहिक बंधन है जिसमें जीवन और मृत्यु—दोनों ही आकर मिलते हैं।

तुम एक प्रदीप्त दीपक हाथ में लिए अपने घर के छज्जे पर खड़ी हो। तुम वहाँ दूर खड़ी हो, पर मेरा विचार है, मैं तुम्हें देख सकता हूँ क्योंकि जहाँ तुम खड़ी हो, वहीं पर आदि और अन्त आकर मिलते हैं।

जिन द्वारों को तुमने अपने हाथों से खोल दिया है उन्हीं के बीच से मेरा जीवन संसार बह रहा है।

क्यों! —अपने द्वार पर तुम मेरे अधरों के लिए मृत्यु का प्याला लिए खड़ी हो! वही प्याला ना! जिसमें अपनी जीवन-मृत्यु से तुमने अमृत भर दिया है।

तुम्हारी मृत्यु ने मुझे पूर्णता की ओर बहा दिया

संसार की सहस्रों वस्तुओं को यूँही अकेला छोड़कर तुम कूच कर गईं——मर गईं। मेरे जीवन-शोक में फिर से उत्पन्न होने के लिए ही तुमने शरीर को छोड़ा था, ना !

पर जीवन-गति हो जाने पर मैंने अनुभव किया कि मेरा जीवन भी अब पूर्णता की ओर बहने लगा है।

तुम्हारे प्राण-त्याग के पश्चात मुझे आभास होने लगा कि नर और नारी——दोनों ही मेरे जीवन में सदैव के लिए समन्वित हो रहे हैं।

यदि प्रेम-देव की उपस्थिति में ही एक दूसरे को पा सकें तो अच्छा है

नारी ! तुम मेरे घर में रहा करती थीं तब तुमने मेरे घर का सृजन अपने सौन्दर्य और अनुशासन से किया था। अतः मेरी इच्छा है तुम वैसा ही सौन्दर्य और अनुशासन मेरे इस वैरागी जीवन में भी ला दो।

समय के टूटे और धूलि-धूसरित टुकड़ों को तुम हटा दो, खाली पड़े गिलासों को भर दो और असावधानी से किये गये सब कामों को फिर से सुधार दो।

तत्पश्चात्, मन्दिर के अन्तर द्वार को तुम खोल दो, अपने ही हाथों से एक दीपक जला लो और तब मुझसे कहो—कि हम दोनों ही अपने प्रेम-देव की उपस्थिति में निडर होकर एक दूसरे को पा रहे हैं और एक दूसरे के जीवन-साथी बन रहे हैं।

ना हमारा अपने पर अधिकार है न अपने घर पर

आकाश अपने ही नीला-वर्ण में छिपे स्वप्नों को निहार रहा है। हम बदलिया के समान उसी आकाश की भूँठी—विचारा-वलियाँ हैं। हमारा अपना कोई घर नहीं। इसी आकाश की छाती पर चमक रहे सितारे शाश्वत् के मुकुट पर दीप्त हैं। इन्हीं सितारों के जो भी लिखित पत्र हैं वे स्वयं भी शाश्वत हैं। पर हमारे अपने लिखे पत्र तो केवल पेन्सिल की लकीरें हैं जो किसी भी क्षण मिट सकती हैं।

अपना तो केवल इतना ही अधिकार है कि वायु की मंच पर आकर अपना नाटक खेल लें, अपने तंबूरे बजा लें और कुछ क्षणों तक के लिए हँसी की बिजलियाँ गिरा दें।

परन्तु इतनी बात अवश्य है कि हमारी हँसी ही सारे संसार की वर्षा का उद्गम है। हमारी हँसी में वास्तविकता है पर बादलों की गड़गड़ाहट निरर्थक है।

अपने जीवनोपार्जन के लिये समय पर हमारा कोई दावा नहीं, और नांही, उस स्वांस पर हमारा अधिकार है जिसने—नामकरण से पूर्व ही हमें जीवन दे दिया।

मेरे चरणों की पुजारिन कितनी अच्छी है

राह मेरी विवाहित जीवन-संगिनी है । उषा से लेकर संध्या तक वही मेरी जीवन-साथी है और मेरे चरणों में बैठी हुई मुझसे बातें करती है । वही सारी रात्रि मेरे स्वप्नों के लिए गीत गाती रहती थी ।

क्या मैं तुम्हें बता दूँ कि मैंने उसे कैसे पाया ?

वस्तुतः उसके और मेरे मिलन का कोई आदि नहीं है । वह तो अनन्तरूप से नित्यप्रति ही उषा की बेला में मुझसे मिलती है और तत्पश्चात् नवीन पुष्पों और नवीन गीतों से अपने ग्रीष्म को सजाती है ।

उसका प्रत्येक नवीन चुम्बन मेरे लिए प्रथम चुम्बन है । मेरी राह और मैं स्वयं दोनों ही प्रेमी हैं । उसे प्रसन्न करने के लिए मैं अपने वस्त्र नित्य ही रात्रि को बदल लेता हूँ । नवीन वस्त्र पहनकर दिवस होने से पूर्व ही मैं पुराने वस्त्रों को सड़क के किनारे स्थित किसी धर्मशाला में निश्चित छोड़ देता हूँ ।

कुछ खोकर भी कुछ पा लिया जाता है

पुराने मार्ग से नित्यप्रति मेरा आना-जाना रहता है।

अपने फलों को मैं स्वयं ही बाज़ार ले जाता हूँ। अपने गाय-बैलों को भी में ही टहलाने ले जाता हूँ। घास के उस पार मैं स्वयं ही अपनी नौका को लेकर जाता हूँ—और इसी कारण, मैं निर्झर की धाराओं पर बने सब मार्गों से परिचित हो गया हूँ।

एक दिन प्रातः मेरी डलिया तश्तरियों से वड़ी भारी हो गई थी। उस समय किसान अपने खेतों में व्यस्त थे। चरागाह मवेशियों से भरे हुए थे और पृथ्वी की छाती पके हुए चावलों से थिरक रही थी।

एकाएक, एक हवा का झोंका आया और मुझे ऐसा लगा मानो आकाश मेरे मस्तिष्क को चूमने वाला है। मुझे, तब, ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरा मस्तिष्क प्रातः की बेला के समान अंधकार रूपी कोहरे से बाहर निकल रहा है।

तब मैं भूल गया कि मुझे अभी और चलना है। द। चार कदम चल लेने पर ही अपना परिचित संसार मुझे अनोखा-सा दिखाई पड़ने लगा। तब मैंने समझा कि जैसे कली को अपना पुष्प अनोखा-सा जान पड़ता है; ऐसे ही मुझसे बना मेरा संसार मुझी को अनोखा जान पड़ता है।

मेरे नित्यप्रति जीवन का मस्तिष्क ज्ञान मुझे शर्माया-सा प्रतीत हुआ। परीदेश को सौन्दर्य-घटा से लुभाने वाली वस्तुओं को देखकर मैं बहक गया।

यह मेरा अपूर्व सौभाग्य है कि उस प्रातःकाल, मैं अपने मार्ग पर चलते-चलते खो गया और इस प्रकार अपने को खो देने पर मेरा भूला हुआ पर शाश्वत् बचपन मुझे फिर से मिल गया।

तुम किस स्वर्ग को खोज रहे हो ? वही न जो तुम्हारे पास है

एक बार तुमने पूछा था, मेरे बच्चे ! —'स्वर्ग कहाँ है ?' महापुरुष कहते हैं—'स्वर्ग का अस्तित्व जीवन और मरण के संस्कार के बिल्कुल परे है। वह वहाँ है जहाँ दिन-रात का कोई अधिकार नहीं।—वह वहाँ है जहाँ इस भूलोक की कोई स्थिति नहीं।'

किन्तु तुम्हारा कवि जानता है कि उस स्वर्ग की कामना सदैव समय और स्थान के लिए इच्छुक है और बारम्बार उसकी यही अभिलाषा है कि इस पृथ्वी की भाग्यशाली धूलि में वह स्वयं भी जन्म ले ले।

मेरे बच्चे ! तुम्हारे ही कारण सागर आनन्दमय हो, ढोल बजा रहा है। पुष्प भी तुम्हारे ही चुम्बन के लिए उत्सुक हैं; मेरे बच्चे, क्योंकि स्वर्ग तुम्हीं में उत्पन्न हुआ है—और हुआ है उत्पन्न तुम्हारी ही माता रूपी धूलि की गोदी में।

इस महा निराशा में केवल आशा ही जीवन का सहारा है

जैसे ही चैत मास मरणासन्न हुआ और ग्रीष्म ने जैसे ही, अनिच्छामय पृथ्वी को अपने चुम्बनों से सताना आरम्भ कर दिया तब मैंने सोचा कि मैं भी अब अपनी कली के नेत्रों को खोल दूं। कुछ डरा-सा कुछ उत्सुक-सा मैं वैसे ही आया और मानों एक नटखट बालक की भाँति साधु की झोंपड़ी में ताककर कुछ देखने का प्रयत्न करने लगा।

मैं खड़ा हो गया। मैंने सुना कि उजड़े हुए वन-वृक्षों के मध्य एक भयंकर कानाफूसी चल रही है। मैंने कोकिल के गायन को भी सुना पर उस समय जब ग्रीष्म पूर्णतया थककर बैठ गया था। अपनी जन्म-कोठरी के समीप लगे—अशान्त एवं थिरकते हुए पत्तों से बने आवरण के पार मैंने देखा—तो क्या देखा कि 'संसार उदास है, दुखी है और निराशा की भाँति उजड़ा हुआ है।'

किन्तु तिस पर भी एक निडर युवक की भाँति अपने यौवन पर विश्वास रखते हुए मैं निस्संदेह एवं शक्तिमय हो इस संसार तल पर आया। इसी संसार में पदार्पण करते ही आकाश के प्रदीप्त कटोरे से मैंने जलती हुई ज्वाला-सी मदिरा को उठाकर पी लिया। तत्पश्चात् मैंने सगर्व उषा को नमस्कार किया।

मैं तुम्हें बता दूं कि मैं वही 'चम्पा-पुष्प' हूँ जो सूर्य की सुगंध को अपने हृदय में रखकर जी रहा है।

माया रूपी सौन्दर्य ! कितने बड़े हो पर छोटे होकर रहते हो, एं !

मेरे जीवन में 'संध्या' सदैव नीरव एवं जनहीन रही है। ऐसे ही एक दिन संध्या समय में एक पुस्तक पढ़ रहा था और पढ़ते-पढ़ते जब मेरा हृदय अतृप्त हो उठा तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो सौन्दर्य एक वस्तु है जिसे व्यापारियों ने शब्दों में गढ़कर रख दिया है। अन्ततः थककर मैंने पुस्तक को बन्द कर दिया और मोमबत्ती के धूंधले फूल को झाड़ दिया। तब एक क्षण पश्चात् ही मैंने अनुभव किया मानो सारे कमरे में चन्द्र-ज्योत्सना की बाढ़-सी आ गई है।

हे माया रूपी सौन्दर्य ! भला तुम किस प्रकार एक बत्ती की छोटी-सी लौ के पीछे छिपे रहते हो ?—और फिर, क्या बता सकते हो—ऐसे छोटे से अस्तित्व को लेकर तुम किस प्रकार समस्त आकाश को अपने सौन्दर्यपूर्ण तेज से आच्छादित कर देते हो ?

न जाने किस कुहा की भाँति कुछ अकिंचन शब्द एक पुस्तक से निकलते हैं और उस रूपेली को अवगुण्ठित कर देते हैं जिसके कंठ ने समस्त पृथ्वी के हृदय को अव्यक्त शान्ति देकर चुप कर दिया है।

उसके नयन मेरे जीवन से ज्योति पीकर इठलाते हैं

अरे ! यह 'शिशिर' तो मेरी है क्योंकि मेरे हृदय में यह चट्टान की भाँति उमड़ी पड़ी है। तुम्हें नहीं मालूम क्या ?—उसके चमकते हुए चाँदी-से बिछुओं के घूँघरू मेरे रक्त में रात-दिन गूँजा करते हैं। उसका धूँधला-सा घूँघट-पट मेरी प्रत्येक साँस में थिरकता हुआ दिखाई देता है और थिरकता हुआ ही अन्तस्तल में पहुँच जाता है।

तुम्हें ना मालूम हो तो मैं क्या करूँ। मुझे तो ज्ञात है कि मैं अपने सभी स्वप्नों में उसके बिखरे हुए बालों से किए गये स्पर्श का अनुभव करता हूँ। वह पत्तियों के उस कंपन में स्थित है जो मेरे जीवन के प्रत्येक स्पन्दन में नाच चुकी है।

मुझे ज्ञात है, उसकी वे आँखें जो नीलाकाश से मुस्करा रही हैं—मेरे ही जीवन से ज्योति को पीकर इठला रही हैं।

योगी-युवक

हे राजा के सलाहकार ! जो घूस तुमने मुझे दी थी उसे अब तुम वापस ले लो। मैं वही नारी हूँ जिसे तुमने उस तपोवन में इसलिए भेजा था कि मैं उस हठी युवक को विचलित कर दूँ—जिसने आज तक नारी-सौन्दर्य को नहीं देखा।

क्षमा करना। मुझे दुःख है कि आपकी आज्ञा पालन करने में मुझे असफलता मिली।

धीरे-धीरे मन्द गति से निशि बीतने लगी। उषा की बेला में वह योगी-युवक नदी के तट पर आया और बीच-धारा में स्नान करने लगा। मैंने उसे देखा—उसके भूरे-भूरे बालों के गुच्छे किसी योगी की जटाओं के समान उसके कंधों पर भीड़ लगाये खड़े थे। उस समय ऐसा लग रहा था मानो उषा की बेला में बादलों का एक गुच्छा उसकी गर्दन के चारों ओर लटका हुआ है। उसे देखकर मैं वास्तव में आश्चर्यचकित-सी हो गई—क्योंकि उसके शरीर का अंग-प्रत्यंग सूर्य की भाँति चमक रहा था। उसके सौन्दर्य से मुग्ध होकर, हम सबकी—सब नौका में बैठ गईं और उसी युवक के समीप ही नौका-विहार करने लगीं—हँसती हुई और खूब गाती हुई।

कुछ समय पश्चात् हमने अनुभव किया कि हमारा राग-रंग ऐसे युवक के लिए व्यर्थ है क्योंकि उस पर हमारी अठखे-

लियों का कोई प्रभाव ही न हुआ। तब—अपनी आन्तरिक प्रसन्नता से पागल होकर हम सब-की-सब नदी में कूद गईं। —और उसी हठी योगी के चारों ओर नाचने लगीं। हमारे ऐसा करने पर ना तो वह कुछ बोला ही और न क्रोधित हुआ पर स्वयं हमने ही ऐसा अनुभव किया मानो धारा के किनारे से सूर्य के समान एक शक्ति मुँह बिगाड़ कर हमें घूर-घूर कर देखने लगी है।

एक शिशु—भगवान की भाँति उस योगी बालक ने अपने चक्षु खोले और हमारे नाच-रंग तथा कनखियों को देखने लगा। आश्चर्य स्वयं लज्जित हो गया और उस समय तक लज्जित रहा जब तक कि उस योगी की तेजस्वी आँखें सुबह के तारों की भाँति चमक न गईं। फिर हाथ जोड़कर उसने एक मन्त्र का उच्चारण किया। उस मन्त्र में हमारे प्रति श्रद्धा थी और उसके कल-कण्ठ में हमारे प्रति सराहना। हम सबने यह देखा कि उसके मन्त्रोच्चारण की कोमल शक्ति से बन की प्रत्येक पत्ती रोमांचित हो रही थी।

मुझे पूर्णतया ज्ञात है—इससे पूर्व कभी भी सांसारिक स्त्री के प्रति इससे अधिक सुन्दर मन्त्र का उच्चारण नहीं किया गया। मुझे ज्ञात है—उस सुन्दर मन्त्र के सुन्दर शब्द उस सुन्दर उषा की नाँई थे जो शान्त खड़ी पहाड़ियों के पीछे से एकाएक आकर अपना रूप दिखला देती हैं। मैं तुम्हें बताऊँ—जैसे ही इस नव-युवक ने अपनी मादक आँखें खोलीं, तब वैसे ही,—सुन्दरियों ने अपने ही हाथों से अपने रूपवान मुखों को छिपा लिया। योगी ने देखा कि फिर भी उन सुन्दरियों की पतली कमरें छिपी हुई

हँसी के प्रभाव से लचक रही हैं तो उसके माथे पर संदेह की एक रेखा दौड़ गई। यह सब कुछ देखते हुए भी मैं शीघ्रतर उसके समीप गई—ऐसा प्रदर्शित किया कि मैं बहुत दुखी हूँ और उसके चरणों में अपना सिर रखकर, मैंने कहा—'देव! मेरी सेवा भी स्वीकार कर लो।'

ऐसा कहकर मैं उसे शीतल धारा के तट पर एक सुहावने और मनमोहक कुंज में ले गई। वहीं पर अपनी रेश्मिन साड़ी के छोर से मैंने उसका शरीर पोंछा। मैं नीचे झुकी और पृथ्वी पर घुटने टेककर अपने केशों के छोर से उसके कोमल पैरों को पोंछ दिया। तत्पश्चात् अपना मुख उठाकर, मैंने उसके तेजस्वी मुख को देखा और अपनी आँखों को उसकी सुन्दर आँखों में गढ़ा दिया—मैं देखती रही उसकी ओर। तब मैंने अनुभव किया कि यदि संसार का सर्वप्रथम चुम्बन किसी नारी को मिला है तो वह केवल मुझे मिला है।

मैं यह सोचे बिना न रह सकी कि मैं भाग्यवती हूँ और मेरे साथ मेरा ईश्वर भी सौभाग्यशाली है जिसने मुझे नारी का जन्म दिया। मैंने सुना, वह कह रहा था 'तुम कोई अज्ञात् परमात्मा मालूम पड़ती हो। तभी तुम्हारा स्पर्श अमृत्व देनेवाली किसी देवी का स्पर्श मालूम पड़ता है। और यही कारण है तभी तो तुम्हारी काली आँखों में अर्धरात्रि की रहस्यमयी एवं सुन्दरतम् कालिमा प्रतिलक्षित हो रही है।'

राज्य के वृद्ध सलाहकार! वृद्ध होकर भी तुम इस प्रकार मुस्कराते हो। समझ लो! केवल सांसारिक ज्ञान की धूलि ने अपने आवरण से तुम्हारे नेत्रों को ढक रखा है। पर देखो!

इस शिशु-समान युवक के बालकीय भोलेपन ने अपने तेजस्वी नेत्रों से इस संसार की अज्ञानतापूर्ण कुहा को भेद दिया है और अंधकार के आवरण को हटाकर शाश्वत् सौन्दर्य के दर्शन कर लिए हैं।

ऐसा योगी युवक नारी रूप में ऐश्वरीय रूप के दर्शन करता है, समझे !

ऐसे योगी युवक की प्रथम बार पूजा करते समय मुझे जान पड़ा—मानो मैं ऐसे तेजस्वी रूप का सामना कर रही हूँ जो मेरे लिए भयावह है पर शीघ्र ही मैं अनुभव करने लगी कि उसी के संसर्ग से मेरे अन्तर में देवी का विशुद्ध रूप जागने लगा है। बस तभी मेरी आँखों में आँसू भर आये। उषा-किरण ने बहन बनकर मेरे केशों को चूमा और वनीली वायु ने मेरे माथे को चूमा—अपने स्पर्श से,—ऐसे चूमा जैसे वह पुष्पों को चूमा करता है।

इन सब बातों को देखकर मेरी सहेलियों ने तालियाँ बजानी आरम्भ कर दीं और ऐसी गन्दी हँसी हँसने लगीं जो वास्तव में एक नारी के लिए आदर्शहीन है। इतना ही नहीं—उन्होंने इतना लम्बा घूँघट निकाला—ऐसी घूँघट में छिप गईं कि उनका घूँघट भूमि की धूलि पर किरढ़ने लगा।

यद्यपि उन सहेलियों के लम्बे-लम्बे केश चारों ओर बिखरे हुए थे, पर तो भी ऐसी ही अवस्था में—ऐसे ही शृंगार में अपने को रूपवान समझ—उन्होंने उस हठ-योगी को पुष्पों से लादना आरम्भ कर दिया।

हाय ! शोक है मुझे—मेरे सूर्य-रूप एवं सच्चरित्र तेजस्वी

युवक ! मैं ऐसी शक्तिहीन एवं असमर्थ क्यों पैदा हुई कि अपनी लज्जा से एक ज्वलंत कुहा भी न पैदा कर सकी---ऐसी कामनामय कुहा कि जिसकी तह में तुम्हारे हठी एवं योगमय अस्तित्व को मैं ढक सकती।

मैं कुछ भी न कर सकी। बस, मैं उस योगी के पैरों पर गिर गई और चिल्लाई---'मुझे क्षमा कर दो, योगी।' पर इतना कह कर मुझे चैन न मिला। योगी के पैरों से उठकर मैं भागी सचमुच ऐसी अशान्त होकर भागी जैसे किसी शिकारी से चोट खाई हुई कोई हरिणी धूप और छाया वाले वन-प्रदेश में त्रस्त होकर चौकड़ी भरती फिरती है।

---इस प्रकार भागने से भी मुझे चैन न मिला। मैं भागते-भागते भी चिल्ला उठी---'मुझे क्षमा कर दो, योगी-युवक ! ---मुझे क्षमा कर दो।'

यद्यपि सहेलियों ने गन्दी हँसी हँसकर और तीखे ताने मुझ पर मारकर, मेरी अशान्त अग्नि को शान्त करने का प्रयत्न किया---पर व्यर्थ--रहा--सब-कुछ।

उस योगी युवक के शब्द शाश्वत बनकर मेरे कानों में गूँजते ही रहे---'तुम कोई अज्ञात् परमात्मा मालूम पड़ती हो।

मेरा हृदय कहाँ से अपनी पुकार सुनता है

जब भी मैं कहीं जाना चाहता हूँ, सूर्य बादलों को भेदकर दिन बिछा देता है। उस समय किसी स्वर्गीय विस्मय की भाँति आकाश भी पृथ्वी को घूर-घूर कर देखने लगता है।

मेरा हृदय क्यों दुःखित है?—इसलिए कि, उसे नहीं मालूम वह अपनी पुकार कहाँ से सुनता है।

क्या यह पवन संसार की उस बात को दोहराने आता है जो मैंने अश्रुओं के संगीत में पिरोकर सूर्य के प्रकाश में छोड़ दी थी? —अथवा, यह उस प्रदेश से जीवन को इस पृथ्वी पर ला रहा है जो दूर सागर में स्थित अन्जान पुष्पों की ग्रीष्म में धूप का आनन्द लेता है।

जब तुझे देखता हूँ तभी तुझे अपने को देखते हुए पाता हूँ

बाजार बन्द हो जाने पर गोधूलि के समय वे घर की ओर आने लगते हैं, तभी मैं भी वहीं सड़क के किनारे छिपकर बैठ जाता हूँ और देखता हूँ—तो क्या ?—कि तू नाव चला रही है।

तू अनवरत गति से नदिया के काले पानी को अपनी नौका द्वारा चीरती हुई कहीं बहुत दूर निकल जाती है। ऐसे ही नौका-विहार करते-करते संध्या हो जाती है। तब सूर्यास्त की किरणें तेरी नौका की पाल पर खेलती हुई दीख पड़ती हैं।

अपनी शान्त मुद्रा में नौका-विहार करते-करते तू एकाएक मेरी ओर देखने लगती है तब मैं तेरे नयनों को पकड़ लेता हूँ क्योंकि मैं उन्हें अपने को देखते हुए पाता हूँ।

जहाँ तूने मुझे देखा कि तुझे पुकारने लगता हूँ और तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे भी अपनी नौका का सहारा देकर इस जीवन-संसार से पार ले चल।

जीवन का दिन बीत चुका अब जीवन की संध्या आ गई

पवन बहने के लिए तत्पर है—यह देखकर यात्रा आरम्भ करने के लिए अपने गीतों की एक पाल बना ली है और नौका-वाहक को आदेश दे दिया है कि वह पतवार को सम्हाले।

मेरी नौका स्वतन्त्र होना चाहती है। उसकी इच्छा है कि जल एवं वायु की स्वतन्त्र गति में वह भी लयपूर्वक नाचे।

दिन अब बीत चुका है और संध्या आ गई है। यही कारण है कि मेरे मित्र भी मुझसे बिदा माँगकर चले गये हैं।

शृंखला को ढीली करके लंगर को हटा दो, नौकावाहक; क्योंकि तारों के प्रकाश में भी हमारी नौका चलेगी।

निशा में भी नौका-विहार करने का जो मेरा हट है उसे जानकर वायु रोमांचित हो गई है और अपने रोमांच से उसने रात्रि के संगीत में गुनगुनाहट भर दी है।

उस निशा में भी मेरा नौका-वाहक अपने नौका-यंत्र पर बैठा है।

मुख न मोड़ो मेरे नाथ ! अब तो स्वीकार कर ही लो

मुझे स्वीकार कर लो, मेरे स्वामी ! इस क्षण तो स्वीकार कर ही लो।

जो दिन यतीम बालक की भाँति मैंने व्यतीत किये हैं, उन्हें भूलने की मेरी इच्छा है।

इस छोटे से क्षण को अपनी गोदी में फैला लो और प्रदीप्त होकर इसे अपने हाथ से पकड़े रहो।

मैं घुमक्कड़ बनकर उन पुकारों को खोजता रहता हूँ जो बरबस मुझे अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं।---पर वे तो सदैव कहीं---अन्जाने में लेजाकर मुझे पटक देती हैं। अब तो मुझे आशा दे ही दो।---क्यों ?---कि मैं शान्त होकर बैठ जाऊँ और अपनी शान्ति की आत्मा में तुम्हारे कहने को सुनूँ।

मेरे हृदय की कालिमा में जो रहस्य छिपे हैं, उनसे मुख न मोड़ो, मेरे नाथ !---और यदि हो सके तो अपनी ज्वाला से उन्हें उस समय तक जलाते रहो जब तक कि वे स्वयं जलकर प्रकाशित न हो जायें।

तेरे आने की दुःखमय प्रतीक्षा को लिए बैठा हूँ—शान्त होकर

दूर कहीं, किन्हीं आँधी रूपी बालचरों ने अपने बादल रूपी खेतों को आकाश में गाड़ दिया है, प्रकाश पीला पड़ गया है और वनों की शान्तिमय छायाओं में वायु आँसुओं से भीग गया है।

अनन्त वेदना की शान्ति मेरे हृदय में आकर बैठ गयी है, ऐसे ही जैसे—मानो कोई विचारवान शान्ति परमेश्वर की बांसुरी का चिन्तन उसके संगीत-परिचालन से पूर्व ही कर रही हो।

मुझे ज्ञात है—तू मेरे जीवन में आएगा पर तेरे आने की दुःखमय प्रतीक्षा में भी मेरा संसार शान्त है।

मेरे प्रेम पर तूने विश्वास नहीं किया, तूने मुझे जलाकर देखा

ज्वलंत दु:ख की वेदना मेरे पास भेजकर तूने अच्छा ही किया, मेरे प्रेमी !

कदाचित् तूने मुझे इसलिए जलाया कि बिना जलाये, मेरी हृदय ज्वाला, प्रेम रूपी सुगंध को कभी भी अर्पित न करेगी।

दीप भी तब तक अन्धा है जब तक जलाया नहीं जाता। इसलिए तूने मुझे जलाया ना !

जब कभी भी मेरा मस्तिष्क सुस्ती में ठिठुर जाय, तभी तू अपनी प्रेम-बिज्जु को उससे टकराकर उसे स्फूर्तिमय बना देना।

वह अंधकारमयी कालिमा जिसने संसार को लज्जित बना दिया है---दीप्तिमान दीपक के समान उस समय जलेगी जब तू अपनी जागरूक गरज से उसमें आग लगा देगा।

प्रभु ! अभी तक मुझे मुक्त करने का विचार तुम्हारे मस्तिष्क में नहीं आया

हे प्रभु ! मुझे जीवन की विनाशात्मक एवं कुहामय छायाओं से मुक्त कर दो।

क्योंकि रात्रि काली है—अंधकारमय है और तेरा यह पथिक अंधा है, अतः तू मेरे हाथ को पकड़ कर चल।

जीवन की निराशा से मुझे दूर करो, मेरे स्वामी ! मेरी पीड़ा के बुझते हुए दीपक को अपनी दीप्तिमान ज्योति से छू दो। मेरी चकित शक्ति की तन्द्रा तोड़कर उसे जागरूक एवं सचेतकर दो। मेरे स्वामी !

जब मुझे आगे ही बढ़ना है तो अपने नुकसान का हिसाब लगाने के लिए मुझे पीछे मत पड़ा रहने दो।

मेरी इच्छा है—प्रभु—कि मेरा मार्ग प्रत्येक क्षण गा-गाकर मुझे बताता रहे कि मेरे जीवन को प्रत्येक पद पर आश्रय मिलता रहेगा।

मैं बार-बार यही कहूँगा मेरे प्राणेश !—कि जीवन रूपी निशा अंधकारमय है और तेरा मानव रूपी पथिक अंधा है। अतः आवागमन से छुटकारा पाने के लिए, तुम मेरा हाथ पकड़-कर अपने हाथ का सहारा दे दे।

प्रेम का डोरा किसी दिन जीवन और मृत्यु को एक बना देगा

वह दीप जो अपने हाथों पर रखे मैं चला जा रहा हूँ, वही दूरस्थित किसी तामस अज्ञान का शत्रु है ।

जिस मार्ग पर मैं अनवरत गति से चल रहा हूँ वही मेरे लिये भयावना बन गया है क्योंकि उसी पर लगे पुष्पक वृक्ष भी मेरी ओर ऐसे भौंह सिकोड़ कर देखते हैं जैसे कोई डरावनी भूतात्मा किसी प्राणी को खा जाने से पूर्व उसे मुँह बिगाड़ कर देखती है ।

मैं अपने मार्ग पर चल तो रहा हूँ पर मेरा ही पद-शब्द भूमि से लौट-लौट कर मेरे कानों में ऐसे गूँज रहा है जैसे कभी मेरा अपना ही संदेह मस्तिष्क में छाकर गूँजता है ।

अत: मेरे देव तेरे ही उषाकालीन दीप को देखने की पिपासा से प्रेरित होकर अन्तर ही अन्तर प्रार्थना कर रहा हूँ। किसलिए ? मैं उस क्षण का साक्षात्कार चाहता हूँ जब दूरस्थित और निकटस्थित प्रेमीगण एक दूसरे के पास आयें, प्रेमपूर्वक मिलें और एक दूसरे का अनुरागमय हो चुम्बन करें। और हाँ ! मैं उस शुभ घड़ी की भी प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब जीवन और मृत्यु का हृदय प्रेम से परिप्लावित होकर एक हो जावेगा।

मेरे हृदय की वेदना में संसार के हृदय की वेदना परिलक्षित है

तू मुझे बचाने जब भी आता है तभी तेरा संसार धीरे-धीरे पैर उठाकर चलने लगता है।

जब भी मेरे हृदय से कालिमा के धब्बे धुल जाते हैं तभी तेरे सूर्य के प्रकाश को वे अधिक तेजस्वी बना देते हैं।

क्योंकि कली अपने संपूर्ण सौन्दर्य सहित मेरे जीवन में नहीं खिली इसलिये उसने संसार के हृदय में अशान्त वेदना को जन्म दे दिया है।

मेरी आत्मा तेरी मुस्कान में संगीत का स्वर केवल उस समय भर पावेगी जब कफन रूपी अन्धकार से वह छुटकारा पा लेगी।

मानव बस प्रतीक्षा करता रहे, फिर प्रतिज्ञा स्वयं पूर्ण हो जायेगी

मेरे हृदय ! अपने विश्वास को दृढ़ रखो क्योंकि निशा के पश्चात् दिवस अवश्य आयेगा।

प्रतीक्षा का वह बीज जो मिट्टी की गहनता में तिरोहित है वह कभी-न-कभी अवश्य ही बाहर आकर खिलेगा।

निंदिया जो कली के समान अपने नयनों को मींचे पड़ी है, वह भी प्रकाश के सम्मुख अपने हृदय को खोल देगी और निंदिया के समान निशा की शान्ति प्रकाश की बेला में गूँज उठेगी।

वह दिन अधिक दूर नहीं जब तेरा अपना भार भी तुझे उपहार स्वरूप प्रतीत होने लगेगा। और वह समय भी अधिक दूर नहीं जब तेरी अपनी ही यातनाएँ प्रदीप्त होकर तेरे ही अंधकारमय मार्ग में प्रकाश की रश्मियाँ बखेर देंगी।

शुभ मिलन का क्षण कहाँ स्थित नहीं है

संध्या की गोधूलि में विवाह के शुभ मिलन का फल स्थित है। अतः उस समय तक चिड़ियाँ अपने-अपने गीत गा चुकेंगी और पवन शान्तिमय होकर जलधारा पर लेट जावेगा। हाँ, वह उस समय शयन करेगा जब सूर्यास्त पत्नि के कमरे में एक गलीचा बिछाकर वहीं एक दीप प्रदीप्त कर देगा ताकि निशा पर्यन्त वह जलता रहे।

निस्तब्ध अन्धकार की पदचापों के पीछे कोई अदृष्टा आता हुआ प्रतीत होगा, बस तभी मेरा हृदय भय से काँपने लगेगा।

गीतों की ध्वनि शान्त कर दी जावेगी क्योंकि विवाह-सूत्र में बाँधने वाले मंत्र संध्या के सुन्दर तारागणों की छाया में उच्चारण किए जावेंगे।

आराधना प्रेम की सबसे ऊँची सीढ़ी है और सबसे पहली भी

दिवस का शोरगुल जब थककर आगत् निशा के आँचल में बैठ जाता है तभी सागर का कलकल भी वायु में अपनी ध्वनि भरने लगता है।

दिवस की घुमक्कड़ इच्छायें निशा के प्रदीप्त दीपक को निहार कर शान्तिमय हो जाती हैं और फिर उसी के चारों ओर आकर बैठ जाती हैं।

प्रेम का सुकुमार खेल जब आराधना को प्राप्त कर लेता है तो उसमें शान्त स्वभाव की गम्भीरता आ जाती है। और परिपक्वता में जीवन की धारा गहनता को छूने लगती है और अनेकानेक रूपों वाली सृष्टि जब अपने से परे···दूरस्थ···कहीं रूपहीन सौन्दर्य को पहचानने लगती है तो लज्जित होकर समस्त सौन्दर्य-संसार एक छोटे से घोंसले में आकर बैठ जाता है।

सब सुप्त हैं पर फिर भी कोई स्वयं जागकर सबको जगा रहा है

इस सुप्त भूमि पर कौन अकेला जाग रहा है···और वह भी उस समय जब पवन शान्त पत्तियों के मध्य झपकियाँ ले रहा है।

यदि जागो तो वहाँ जागो जहाँ छोटी-छोटी चिड़ियों के घोंसले शब्दहीन होकर बैठे हैं और जहाँ पुष्प कलियों ने अपने रहस्यमय हृदय को छिपा रखा है।

मैं फिर कहता हूँ···यदि तुम जागो तो वहाँ जागो जहाँ आकाश के तारागण कम्पन से हांफ रहे हैं और जहाँ मेरा ही अपना जीवन वेदना की गहनता को प्राप्त किये बैठा है।

तुम्हारा अपमान किया था, अब तुम्हीं को बुलाता हूँ

प्रातःकाल, तुम मेरे द्वारे आये और तुमने एक गीत गाया, मेरी नींद से मुझे दूर कर दिया और मेरे सामने आये बिना ही जब तुम चले गये तो मुझे तुम पर क्रोध आ गया।

मध्यान्ह में, मेरे दरवाजे पर आकर तुमने पानी माँगा और इस प्रकार तुमने मेरे कार्य में बाधा डाली। तभी मुझे क्रोध आ गया और मैंने तुम्हें गालियाँ देकर भगा दिया।

संध्या समय अपनी प्रज्ज्वलित मशालों को लेकर तुम मेरे द्वार पर आये। मुझे भय लगने लगा क्योंकि तुम मुझे डरावने से लगने लगे। तभी भयभीत होकर मैंने अपना द्वार बन्द कर दिया।

परन्तु अब मध्यरात्रि के दारुण अवसान में मैं अकेला ही दीप···हीन अंधकारमय कोठरी में बैठा हूँ और तुम्हें बार-बार बुलाता हूँ···हाँ, तुम्हें···जिनको अपमानित कर मैंने अपने दरवाज़े पर से ही भगा दिया था।

उन पुष्पों के मध्य मुझे जन्म दो, जो तुम्हारी आराधना करते हैं, देव !

मेरे देव ! धूलि से मेरे जीवन को उठाकर अपने सीधे हाथ की हथेली और नेत्रों की छत्रछाया में रखो।

अपने ईश्वरीय प्रकाश में इसे रखे रहो, मेरे देव और जब चाहो मृत्यु की छाया में इसे छिपा लो।

पीपे के समान जिस रात्रि पर तुम्हारे तारागणों की छाया रहती है, बस उसी में मेरे जीवन को भी रख दो और पौ फटते हो मेरे जीवन को उन पुष्पों में छोड़ दो जो तुम्हारी आराधना के लिये खिलने लगते हैं।

अपूर्णता क्या है, खोना क्या है, मुर्झाना क्या है,—कुछ नहीं

मुझे ज्ञात है कि जीवन प्रेम की पूर्णता को प्राप्त करने के लिए जो कुछ भी खो रहा है···वही पूर्णतया खो नहीं गया।

मुझे विश्वास है उषा-चादर के फैलने पर जो पुष्प मुर्झा जाता है और धारायें जो मरुभूमि में खोई-सी मालूम पड़ती हैं··· वे सब कुछ अर्थात् पुष्प और धारायें पूर्णतया खो नहीं गईं।

जीवन की दौड़ में सुस्त बनकर जो कोई भी पीछे पड़ा रह गया है उसने भी पूर्णतया सब कुछ खो नहीं दिया।

मेरे अधूरे सपने जो अभी अपूर्ण बने बैठे हैं और मेरे गीत जो तेरी वीणा के तारों से चिपके हुए हैं, पर अभी झंकृत नहीं हुए हैं···वही सब अर्थात् मेरे अधूरे सपने और अवाद्य गीत भी पूर्णतया खो नहीं गये हैं।

तुम यह पूछ रहे हो 'मैं क्यों दुखी हूँ'

अपनी बाँसुरी के गीत और पुष्पों को उपहार स्वरूप लेकर बसन्त की एक हठी बेला में तुम मेरे पास आये।

मेरा हृदय बस उसी समय से दुःखित हो गया जब तुमने लहरों में कम्पन छोड़ कर मेरे लाल 'प्रेम कमल' को एक चोट मार दी।

तुमने तो मुझसे कहा था कि जीवन के सम्पूर्ण रहस्य सहित मैं तुम्हारे साथ चला चलूँगा परन्तु इसमें मेरा क्या दोष है··· यदि मई माह की गुँजनात्मक पत्तियों के मध्य में आने से मुझे नींद आ गई और मैं न जा सका।

पर नींद से उठने पर मैंने देखा कि आकाश में बादल घुमड़ आये हैं और वृक्षों की भरी हुई पत्तियाँ पवन के वेग में उड़ गई हैं।

वर्षा की झड़ियों के कारण अपने समीप आती हुई अपनी पद-चापों को मैं सुन रहा हूँ और साथ ही मैं यह भी सुन रहा हूँ कि चिल्ला-चिल्लाकर, मृत्यु के रहस्य को जानने के लिये, तुम मुझे अपने समीप बुलाना चाहते हो। तुम्हारे समीप पहुँचकर मैं तुम्हारी बाहों में अपने हाथ डाल देता हूँ।···यद्यपि ऐसा करने से पूर्व मैं जान लेता हूँ कि तुम्हारी आँखें प्रकोप से जल रही होती हैं और तुम्हारे केशों से स्वेद की बूंदें झड़ रही होती हैं।

कोई मेरे और तेरे सम्बंध को तोड़ता है--कोई उसी को जोड़ता है

अत्यधिक वर्षा के कारण दिवस मटियाला हो गया है।

छितराये हुए बादलों के अवगुण्ठन से बिज्जू क्रुद्ध होकर देख रही है।'

वन पिंजड़े में बँधे उस शेर के समान है जो निराशा में अपने बालों को फड़फड़ा रहा है।

अत: ऐसे दिन जब पवन भी अपने पैरों को फड़फड़ा रहा होगा तब तेरी उपस्थिति में ही मैं भी अपनी शान्ति को पालूँगा क्योंकि दु:खित आकाश ने अपने बादलों से मेरे एकाकीपन को आच्छादित कर दिया है।...उसने ऐसा इसलिये किया है कि मेरे हृदय से तेरे सम्बंध का स्पर्श, अत्यधिक गहन और गंभीर बन जाये।

चारों ओर अंधकार देखकर ही तो तुमसे हाथ पकड़ने को कहा है

निशा के उस आँचल में तूफानी पवन ने मेरे द्वार को तोड़ दिया और अन्दर घुस आया, तिस पर भी मैं नहीं जान पाया कि ···इस प्रकार वर्षा द्वारा कभी तुम मेरे कमरे में घुस आओगे।

उस रात्रि को वायु के प्रबल वेग के कारण दीप बुझ गया था और कमरे में चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार छाया हुआ था।···उसी अंधकार से मैं डर गया और सहायता की खोज के लिए मैंने अपनी भुजाओं को आकाश तक फैला दिया।

उस क्रान्तिकारी अंधकार में भी मिट्टी के कणों पर पड़ा हुआ मैं किसी की प्रतीक्षा कर रहा था। मुझे क्या मालूम कि तुमने तूफान को भी अपनी पताका बना रखा था।

अन्धकार के पश्चात् अरुणिम उषा आई।···तब मैंने तुम्हें उस शून्य पर खड़े हुए देखा जो मेरे घर के ऊपर विक्षिप्त था।

जीवन की अन्तिम विजय मृत्यु है

क्या वास्तव में वह जो सामने से आता हुआ दीख रहा है...विनाशक है।

भीषण दुःख के ज्वार में सागर अश्रुमय होकर सिसकियाँ भरता हुआ प्रतीत होता है।

वे बादल जो लाल-लाल दिखाई दे रहे हैं...हाँ, उन्हीं बादलों को विद्युत कोड़े मार कर भगा देती है। तब वे ही वायु-वेग में आकर उत्पातक वन जाते हैं और उसी समय उस वड़े पागल का गर्जनापूर्ण उल्लास आकाश में छा जाता है।

क्या तुम्हें ज्ञात है...उसी समय जीवन मृत्यु रूपी मुकुट को पहन कर रथ में बैठता है और तभी यात्रा आरम्भ हो जाती है।

वह सर्वस्व जो भी तुम्हारे पास है...उसी को श्रद्धांजलि समझ कर मुझे अर्पित कर दो।

जो कुछ भी तुमने बचा रखा है उसे अपने हृदय से न चिपकाओ और न ही झिझक कर पीछे देखो।

उसके चरणों में अपने शीश को नतमस्तक कर अपने केशों को उसकी पद-धूलि में किरड़ने दो।

तुम इसी क्षण अपने मार्ग पर आ जाओ क्योंकि दीप बुझ चुका है और घर उजड़ा पड़ा है।

तूफानी वायु का वेग तुम्हारे द्वार पर चीत्कार भर रहा है, दीवारें टकरा रही हैं और तुम्हारी छोटी-सी कोठरी के परे से··· जहाँ काला धुंधलापन छाया हुआ है···वहीं से कोई पुकार पुकार कर बुला रहा है।

अतः भयभीत होकर अपने मुख को न छिपा लो। तुम्हारे आँसू व्यर्थ में ही वह रहे हैं, और तुम्हारे द्वार की शृंखलायें टूट चुकी हैं। अपनी यात्रा के अंतिम तट पर दौड़ चलो। जब तुम चलो तो ऐसे चलो मानो निराश नृत्य की सूचना देने के लिए ही तुम्हारे पैर उठ रहे हैं।

जब तुम गीत गाओ तो तुम्हारे गीत का आशय यह हो··· *'मृत्यु की विजय जीवन में अथवा जीवन की विजय मृत्यु में'* अन्तर्निहित है।

ओ नव विवाहिता, अपने भाग्य को स्वीकार कर, और देख, अपने पतिदेव के शुभ्र दीप्त प्रकाश को प्राप्त करने के लिए शुभ सूचक लाल वसान पहन ले और अंधकार को पार कर जा।

म हार जाऊँ और तुम्हें अपना स्वामी बना लूँ---इसीलिए युद्ध किया

तुम्हें आहत करने की इच्छा से मैं तुम्हारे समीपतम पहुँच गया। पर आश्चर्य की बात है···तुम्हें आहत करने की इच्छा को तुम्हारे समीप पहुँचने से पहले मैं न जान सका।

अन्ततः मैंने तुम्हें अपना स्वामी बना लिया···यद्यपि मैंने तुमसे इसलिए युद्ध किया था कि मैं हार जाऊँ।

किसी गम्भीर और रहस्यपूर्ण स्थान पर आकर मैंने तुमसे तुम्हारा कुछ छीना पर ऐसा करने में तुम्हारा ऋण मेरे ऊपर और अधिक बढ़ गया। मैंने हठात् तुम्हारी जीवन-धारा से एक कलह किया···पर ऐसा मैंने इसलिए किया कि तुम्हारी जीवन-शक्ति को पूर्णतया अपनी आत्मा में अनुभव कर सकूँ।

मैंने स्वयं ही विद्रोही बनकर अपने घर में रखे तुम्हारे प्रकाशमय दीप को बुझा दिया, किन्तु आश्चर्य चकित हूँ और एक गहन आश्चर्य तो मुझे उस समय हुआ जब तुम्हारे आकाश ने तुम्हारी आज्ञा पाकर अपनी दीप्तिमान तारकावलि को चमका दिया और मेरे घर को···अंधकारमय घर को फिर से ज्योतिर्मय बना दिया।

तुम मुझे दुःख देने आये पर मैं तो तुम्हें अपना सुख समझता हूँ

क्या मेरे समीप तुम्हारा आना इसलिये हुआ कि तुम दुःखद् विषाद हो ?

चाहे तुम मुझे शोकाकुल करने ही आये पर मैं तो अवश्य ही तुम्हें अपने समीप रखूँगा।

यद्यपि अंधकार के तामस आवरण से तुम्हारा मुख अवगुंठित है, तो भी तुम्हारे मुख को देखे बिना न मानूँगा।

मेरी इच्छा है कि तुम्हारे कर-प्रहार से मृत्यु को पाकर मेरा जीवन अपनी मृत्यु से अग्नि की ज्वाला में कम्पन उत्पन्न कर दे।

मेरे नेत्रों से जो आँसू बह रहे हैं उन्हें तुम्हारे चरणों के चारों ओर बहने दो और तुम्हारी आराधना करने दो।

मेरी अन्तिम इच्छा यही है कि मेरे हृदय की टीस सदैव मुझसे यही कहती रहे कि तुम अब भी मेरे हो।

आँख मिचौनी अब अधिक न चले तो अच्छा है

अपने को तुमसे छिपाने के लिये ही मैंने अपने को छिपा लिया था। मैं वास्तव में तुम्हें टालना चाहता था।

किन्तु अब तो मैं पकड़ा गया, अतः तुम मुझे दंड दो और देखो कि···तब क्या वास्तव में तुमसे मेरा सम्बंध टूट जायेगा।

मेरी इच्छा है कि आँख मिचौनी के इस खेल को अब तुम सदैव के लिये बन्द कर दो।

मैं तुमसे कहे देता हूँ···'यदि अन्ततः जीत तुम्हारे ही भाग्य में है तो तुम, मेरा, मुझसे सब कुछ छीन लेना।'

मेरी हँसी और मेरे गीत···दोनों ही मार्ग के किनारे पर खड़ी हुई झोंपड़ी और महलों में रहते हैं। पर अब क्योंकि तुम मेरे जीवन में आ गये हो···मुझे रुला कर देखो और फिर देखो कि तुम्हारे ऐसा करने से मेरी हृदयतन्त्री टूट भी सकेगी अथवा नहीं।

यह क्या कम साहस की बात है कि मैं मृत्यु की ललकार को भी स्वीकार कर रहा हूँ ?

तेरे प्रेम का ध्यान आने पर जब भी मैं अपनी निद्रा से जाग जाऊँगा…तभी मेरी मनःशान्ति रूपी रात्रि का अन्त हो जायेगा।

तब सूर्य-उषा का उद्रेक अपनी अग्नि रूपी कसौटी से मेरे हृदय को छू लेगा, और तद्उपरान्त मेरे जीवन की यात्रा का विजयी विशाद अपनी कीली रूपी परिस्थितियों के चारों ओर चक्कर काटने लगेगा।

मृत्यु की ललकार को स्वीकार करके भी आगे बढ़ूँगा और स्वयं निंदित और अपमानित होकर भी तेरे कहने को अपने साथ रखूँगा।

यदि तेरे निरीह बालकों के प्रति कोई अनाधिकार चेष्टा की गई तो उस दुस्साहस के विरोध में अपने वक्षःस्थल को नग्न कर दूँगा और साथ ही तेरे समीप खड़े होने का दुस्साहस फिर मैं स्वयं करूँगा…हाँ, तेरे समीप जहाँ तेरे अतिरिक्त अन्य कोई भी खड़ा नहीं होता।

अब तो केवल एक वेदनामय टीस ही हृदय में रह गई है।

मैं तो वह थकी-सी भूमि हूँ जो जीवन से हीन है और लुओं से झुलसी हुई है।

मैं तेरे जल की उस बौछार की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जो रात्रि में आकाश से उतर कर भूमि की ओर बढ़ेगी। जब वह भूमि पर आ जायेगी तभी मैं साहस एवं शान्ति से प्रेरित होकर उसका स्वागत करूँगा।

मेरी इच्छा है कि तेरी वर्षा के बदले में तुझे अपने गीत और पुष्प दे दूँ।

किन्तु मेरा जीवन गोदाम तो खाली पड़ा है। मेरे पास है ही क्या? इस झुलसी हुई प्यास से प्रेरित होकर केवल एक वेदनामय टीस गहन बन बनकर मेरे हृदय से उठती रहती है।

मुझे आभास है···उस अरुणिम उषा की प्रतीक्षा तू भी अवश्य करेगा···जिसके आने पर समय की गोदी अतुल संपत्ति से भर जायेगी।

क्या ऐसा कर भी सकोगे जो मैं तुमसे कह रहा हूँ

ग्रीष्म के उन बादलों के समान मेरे समीप आओ जो आकाश के हृदय···पटल पर अपनी बौछारें बखेरता चला जाता है।

अपनी उत्कृष्ट छायाओं से इन पहाड़ियों के वर्ण को और अधिक गहरा कर दो, शीघ्र ही उजड़े हुए वनों को पुष्पों में परिवर्तित कर दो और इन पहाड़ियों की पहाड़ी जल धाराओं में भी किसी अनन्त की खोज से प्रेरित चेतना उत्पन्न कर दो।

ग्रीष्म के बादलों के समान मेरे समीप आओ और किसी तिरोहित जीवन की आशा···तथा पृथ्वी···प्रफुल्लन जनित हृदयोल्लास से मेरी हृदय···कलिका को रोमांचित कर दो।

प्रकृति से हमारे प्रेम प्रफुल्लन में कितना सहारा मिलता है

तुमसे मेरा साक्षात्कार उस स्थान पर हुआ था जहाँ निशि ने दिवस के छोर को अपने हाथों से छुआ था ।

हम तुम वहाँ मिले थे जहाँ प्रकाश अंधकार को चकित कर उसे प्रातः की बेला में परिवर्तित कर देता है

और हाँ मुझे याद है···हम तुम वहाँ मिले थे जहाँ जल की लहरें एक तट के चुम्बन को दूसरे तट तक ले जाती हैं।

इस अदम्य नीलाकाश के हृदय से एक स्वर्णमय पुकार आया करती है और जब-जब भी वह आती है तभी अपने विषादमय धुँधले आँसुओं को हटाकर मैं तेरे मुख की ओर देखने का प्रयत्न करता हूँ पर किसी कारणवश मैं नहीं जानता···कि···कदाचित् तू मुझे कभी दीख भी जाती है अथवा नहीं ।

यदि 'प्रेम' मेरे लिए नहीं है तो क्यों यह सब प्रेममय दीख रहा है

यदि 'प्रेम' मुझे नहीं प्राप्त हो सकता तो क्यों इस उषा ने अपने हृदय को गीतों में विक्षिप्त कर रखा है और क्यों ही वह प्रेममय कानाफूसी मुझे सुनाई दे रही है जिसे दक्षिण वायु ने इन नव-जनित पत्तियों के मध्य बखेर दिया है ?

यदि मेरे भाग्य में 'प्रेम' नाम की कोई वस्तु नहीं, तब क्यों यह अर्धरात्रि इन नक्षत्रों की वेदना को अपनी इच्छाओं की अशान्त शान्ति में सह रही है।

यदि 'प्रेम' केवल मेरे लिए नहीं है तो मेरा यह मूर्ख हृदय क्यों अपने पागलपन में आशामय होकर उस सागर तक पहुँच जाता है जिसका अन्त वह स्वयं नहीं जानता ?

मैं चाहता हूँ तुमसे मिलते समय मेरी आँखों में आँसू हों

मेरे उपहार का केवल एक अंश इस संसार में स्थित है और जितना भी अवशेष है वह मेरे स्वप्नों में भी निहित है।

तुम मेरे स्पर्श को सदैव भ्रमित कर अपने दीप को छिपा लेते हो और रहस्यमय शान्ति में मेरे समीप आते हो।

अन्धकार में रोमांच को देखकर ही मैं तुम्हें जान जाऊँगा। अदृश्य संसार ही की कानाफूसी सुनकर मुझे तुम्हारा आभास हो सकता है और साथ ही किसी अज्ञात् लट की श्वास का स्पर्श करके ही तुम्हारे कंपन का अनुभव कर सकता हूँ।

मैं केवल उस समय तुम्हें जान पाऊँगा जब मेरे हृदय का उल्लास एकाएक द्रवित होकर विषादाक्त अश्रुओं के रूप में प्रवाहित होने लगेगा।

एक दिन तुम्हें मुझे जानना ही होगा। क्योंकि बिना जाने तुम नहीं रह सकते

मेरे प्रेमी ! मुझे पूर्ण विश्वास है किसी न किसी दिन तुम अवश्य ही मेरे हृदय पर विजय पा लोगे।

मुझे विश्वास है···एक दिन तुम मेरे गहनतम स्वप्नों की थाह को भी अवश्य जान लोगे।

चन्द्र-ज्योत्स्ना के आँचल में लपेट कर जब अपने रहस्यमय सन्देशों को तुम मेरे पास भेजते हो तब मैं न जाने क्या सोचने लगता हूँ और फिर न जाने क्यों मेरी आँखें आँसुओं से डबडबा जाती हैं।

न जाने कब और कैसे हृदय में प्रेम जाग्रत हो गया

मुझे नहीं मालूम, न जाने किसने चुपके से एक प्रेम पुष्प मेरे हृदय में रख दिया है।

हाँ, किसी ने मेरे हृदय को चुरा लिया है और दूर कहीं आकाश में उसे विक्षिप्त कर दिया है।

मुझे इस बात का आभास नहीं कि कदाचित् मैंने उसे पा लिया है अथवा मैं अब भी उसे सर्वत्र खोज रहा हूँ। सचमुच मुझे इतना भी ज्ञात नहीं कि उसे पा लेना एक आनन्द जनित वेदना है अथवा एक विषाद जनित टीस है।

अल्हड़ बनकर जीवन व्यतीत करना क्या अच्छा नहीं होता ?

एक छोर से दूसरे छोर तक केवल वर्षा ही आकाश के प्रांगण पर झाड़ू देती है।

नम वायु के जंगली झोंकों के कारण चमेली···पुष्प स्वयं अपने को अपनी मलय-श्वास में व्यक्त कर देते हैं।

रात्रि के अन्तःस्थल में एक रहस्यपूर्ण उल्लास स्थित है··· और वह इस कारण है कि अवगुण्ठित आकाश किन्हीं अज्ञात् तारों में जाकर छिप गया है।···और हाँ इस कारण है कि अर्धरात्रि का वनोल्लास छोटी-छोटी चिड़ियों के गीतों में जाकर लुप्त हो गया है।

अत: अपने हृदय को उसी निशा की उल्लासमयी मादकता में भरकर मैं दिवस की प्रकाशमयी बेला में विचरण करना चाहता हूँ।

बुरा न मानना क्योंकि मैंने हठात् तुझे अपने सहारे के लिये पकड़ लिया था

अपनी यात्रा दिन में आरम्भ करने के कारण मैं अपने को सब प्रकार सुरक्षित समझता हूँ। उस समय तेरे मार्ग पर छाये हुए विस्मय की चिन्ता मैं नहीं करता क्योंकि अपनी गति पर मुझे गर्व है और क्योंकि तेरी ही अपनी ज्योति मेरे और तेरे मध्य विराजमान रहती है।

अब निशा आ गई है और मुझे अनुभव होने लगा है कि तेरा मार्ग प्रत्येक पद पर अंधकार में है। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो पुष्पों का सुवासित गंध प्रकाश के लोप होने पर, शान्ति के कानों में ऐसे ही कुछ कह रहा है जैसे अंधकार के निकट आने पर माँ अपने बालक के कानों में कुछ कहती है।

भयातुर हो, मैंने हठात् तेरे हाथ को पकड़ लिया है और अब मेरे एकाकी संसार में तेरा स्पर्श मेरे साथ है··· यह मुझे ज्ञात है।

जो याद रखना चाहिये वह याद नहीं रहता, जिसे भूलना चाहिए उसे नहीं भूल पाते

निशा पर्यन्त चलकर ही मैं जीवन के प्रीतिभोज तक आ सका हूँ, और अब प्रातः की स्वर्णिम रश्मियों का कटोरा अपने प्रकाश पुँज से खिलकर मेरा स्वागत करने के लिए प्रस्तुत है ।

उसी उल्लास के आवेश में मैंने गाया, मुझे नहीं मालूम कि किसने मुझे वह प्रीतिभोज दिया था । मुझे तो बस इतनी सी स्मृति है कि उस देने वाले का नाम पूछना मैं भूल गया था । मध्यान्ह के होते-होते मेरे चरणों के नीचे धूलि जलने लगी और सूर्य सिर के ऊपर आ गया, तब प्यास की तृष्णा से त्रसित होकर मैं एक कुएँ के समीप पहुँचा ।—मेरे मुख में पानी उड़ेल दिया गया और मैंने पानी पिया ।

वह रुबी का प्याला जो मुझे प्रिय था वही एक चुम्बन के सदृश मधुमय था । मुझे याद है···जिसने मुझे उस प्याले से पानी पिलाया···उसी का नाम तक पूछना मैं भूल गया था ।

उसी दिन थकी हुई संध्या के समय, अपने घर जाने की कामना लेकर, जब मैं मार्ग खोजता फिर रहा था तभी मेरा मार्गदर्शक एक दीप लेकर मेरे समीप आया और मुझे मेरा भूला हुआ पथ दिखा दिया ।

मुझे स्मरण है···मैंने उसका नाम पूछा था किन्तु उस महा-

शान्तिमय रूप में, मैं केवल उसके प्रकाश को ही देख पाया और यह अनुभव किया कि उसकी मुस्कान निशा के महा तिमिर में भी प्रदीप्त है।

अपने को खो देना अपने को पाने से कहीं अधिक सुखद है

मुझे छोड़ कर तुम न जाओ क्योंकि रजनी आ गई है।

पथ एकाकी है, उजड़ी हुई दशा में है और फिर तिमिर की किसी काली उलझन में खो गया है।

यह धरती माता इस प्रकार से शान्त-सी पड़ी है मानो कोई निस्सहाय अन्धा बिना लाठी के सामर्थ्यहीन होकर पड़ा है।

मेरे दीप को प्रदीप्त करने वाले उस क्षण की प्रतीक्षा मैं युगों से कर रहा हूँ···जो मेरे दीप को प्रकाशवान् बनावेगा और साथ ही मेरे पुष्पों को भी चुनेगा।

तट-हीन सागर की उस सीमा तक मैं पहुँच चुका हूँ जहाँ मैं एक गोता लगाऊँगा और सदैव के लिये अपने को खो दूँगा।

तुमसे मिलने से पहले ही न जाने क्या-क्या हो सकता है

मैंने नहीं जाना था कि उषा के आने से पूर्व तेरा स्पर्श कर भी सकूँगा अथवा नहीं।

मेरी निद्रा के द्वारा तेरा संदेश मेरे पास आ गया है अतः अपने ही आँसुओं से विस्मित होकर अपने नेत्र खोल दिये हैं।

आकाश मुझे ऐसा दीख पड़ता है मानो मुझसे कहने के लिये उसके पास अनन्त संदेश हैं। उसे देखकर मेरे शरीर का प्रत्येक अंग गीतों से स्नानित-सा हुआ जा रहा है।

ओस की बिन्दु के भार से जैसे पुष्प झुक जाता है, उसी प्रकार तेरी आराधना में मेरा हृदय विनम्र होकर नत्-मस्तक हो गया है तथा अपने जीवन के वेग को जानकर मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है मानो वही वेग अनन्त की ओर प्रवाहित हो रहा है।

चाहो तो स्वतंत्रता की रज्जू से बाँध लो पर परतंत्रता की से नहीं

अधिक समय व्यतीत हो जाने पर भी, जब, कोई भी अतिथि मेरे घर नहीं आया तो मेरे घर के द्वार में ताला लग गया और मेरी खिड़कियाँ बंद हो गई। मैंने सोचा कि क्या मेरी रात सूनी ही बीतेगी ?

अपने नेत्रों को खोलने पर मैंने देखा कि समस्त अंधकार दृष्टिगोचर हो गया है।

मैं एकाएक उठ बैठा, दौड़ा और देखा कि मेरे ही घर के कुंदे टूटे पड़े हैं।···और द्वारों को तोड़कर वायु और प्रकाश दोनों ही कमरे में पताकाओं के समान उड़े चले आ रहे हैं।

अपने ही घर में मुझे बन्दी बना दिया गया और जब मेरे ही घर को मेरे लिये बन्दीगृह बनाकर उसका द्वार बन्द कर दिया गया, तब दु:खित होकर मेरा हृदय उस कारावास से और उसके वातावरण से बचकर निकलने के लिये योजनायें बनाने लगा।

अब अपने ही टूटे द्वार पर मैं शान्त बैठा हूँ और तुम्हारे आने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ···और देखो, इसलिए कि स्वतंत्रा की रज्जू से तुम मुझे बाँधे रहोगे।

उसके रहते हुए भी यदि जीवन सूना है तो क्या किया जाये

मेरे हृदय ! अपनी जन-हीन और सूनी जीवन-निशा के सब दीपों को बुझा दो।

तुम्हारे जीवन द्वार को खोलने के लिए ही कहीं से पुकार आ रही है क्योंकि प्रातः का प्रकाश तो अभी दूर है।

मेरे हृदय ! सुनो, अपने एकाकी जीवन की बाँसुरी को तुम किसी कोने में रख दो क्योंकि उसके रहते हुए भी तुम्हारा जीवन निर्जन-सा और सूना-सा बना हुआ है।

तुम्हारे पास यह पुकार इसलिए आ रही है कि तुम इस शान्त वातावरण का आनन्द लेने के लिए बाहर आ जाओ। क्योंकि प्रातः की अरुणिम लालिमा तुम्हारे गीतों को स्वयं गा-गाकर तुम्हें सुनाना चाहती है, अतः तुम गृह-द्वार से बाहर आ जाओ।

मैं तो एक भंवरा हूँ जो पुष्प के हृदय तक पहुँच ही जाता है

तेरा सर्वप्रथम पुष्प उपहार दिवस की इस सर्वप्रथम बेला में मुझे प्राप्त हो गया है। और इसी उपहार के साथ तेरे प्रकाश की एक धुंधली रश्मि-लय भी मेरे पास आ गई है।

मैं तो एक मधुप हूँ जो तेरे स्वर्णिम प्रातः के उर-अन्तर में बस चुका है।

देख ! मेरे पंख उषा-पुष्प के लालिमामय पराग से रंजित हैं।

तेरे चैत मास में गीतों का जो मधुर प्रीति-भोज है---उसमें मुझे भी स्थान मिल गया, और परतन्त्रता की शृंखलाओं से छूट कर, मैं अब ऐसे ही स्वतन्त्र हो गया हूँ जैसे---खेल ही खेल में प्रभात का 'अरुणिन', प्रातः की धुंधली कुहा से छुटकारा पा लेता है।

'मुझे मुक्त कर दो', बस मेरा यही नारा है

जिस प्रकार वनों में चिड़ियायें स्वतन्त्र रूप से विचरण कर रही हैं और जिस प्रकार पथिक लक्ष्यहीन होकर अदृश्य पथों पर भटक रहे हैं उसी प्रकार मैं भी विचरण करना चाहता हूँ। अतः तुम मुझे मुक्त कर दो।

मुक्त होकर—जैसे वर्षा का प्रवाह अपने बाँध को तोड़कर और तूफान अपने को बन्दी बनाने वाले तालों की आधार-शिला को हिलाकर अपने अज्ञात लक्ष्य की ओर दौड़ते हैं, उसी प्रकार निर्द्वन्द्व होकर अपने लक्ष्य को पाने की कामना मुझे भी है। अतः तुम मुझे मुक्त कर दो।

तुम्हें ज्ञात हो कि मैं ऐसे ही मुक्त होना चाहता हूँ जैसे वन का दावानल स्वतन्त्र होकर गरजता है, जोरों से हँसता है और फिर ललकार-ललकार कर अन्धकारमय पराधीनता का प्रतिकार करता है।

यदि कोई न जागे तो उसे जगाओ अवश्य पर चाँटा न मारो

तुमने मुझे पुकारा था, पर तुम्हारी पुकार को मैं न सुन सका क्योंकि अपनी दीवारों की साया में मैं सोया हुआ था।

मेरे न सुनने पर तुमने मुझे चांटा मार कर जगा दिया, पर इस प्रकार जागने पर मेरी आँखों में आँसू आ गये।

—तब जागने पर, चकित होकर मैंने देखा कि सूर्य उदित हो चुका था, सागर का प्रवाह-ज्वार किसी गहनता से एक सन्देश ला चुका था—-बस तभी मेरी नौका भी, नाच-रंग में लिप्त सागर के वक्षस्थल पर टकराने के लिए तत्पर हो गई।

अरे ! ओ सुप्त ! तू भी अपने नेत्रों को खोल और जाग जा

हर्ष की बेला में खूब आनन्दित हो जाओ।

मैं तुमसे ऐसा इसलिए कह रहा हूँ कि पराधीनता रूपी निशा की शृंखलायें टूट चुकी हैं, और जो अब तक स्वप्न था उसी स्वप्न के हानिकारक अस्तित्व का विनाश होकर—वही सत्य रूप में परिवर्तित हो गया है।

शब्द ने अपने अवगुंठन में कोलाहल मचा दिया है, और प्रात: की कलिकायें भी अब नयनोन्मेष की साधना में रत हैं। अत: ओ सुप्त ! अब तू भी अपने नेत्रों को खोल और जाग जा।

अब स्वतन्त्रता से प्रेरणा पाकर प्रकाश की उल्लासमयी बधाइयाँ पूर्व के इस छोर से पश्चिम के उस छोर तक फैल रही हैं।

—और जर्जरित तथा भग्न कारागृह के भग्नावशेष से भी अब विजय के गीत गूँज-गूँज कर आकाश की ओर बढ़ रहे हैं।

देव ! सब तुम्हें शीश नवाते हैं, पर मैं तो तुम्हें देखता ही रहता हूँ

यह तो वह क्षण है जब उषा-रश्मि के सुनहरी गलीचे पर मैं तुम्हें बैठा हुआ देखता हूँ।

तुम्हारे राजमुकुट के उत्सव के समय सूर्य चमकता है, तारिकावलियाँ तुम्हारे चरणों में गिर-गिर जाती हैं, स्त्री और पुरुषों के झुण्ड के झुण्ड आकर तुम्हें शीश नवाते हैं और चले जाते हैं पर मैं––वास्तव में, मैं तो एक कोने में निस्तब्ध बैठा तुम्हारी ओर एकटक देखता रहता हूँ।

मेरे पास कुछ भी नहीं सही, पर फिर भी मैं तुम्हारा स्वागत कर सकता हूँ

इस पतझड़ के प्रभात में मेरे अतिथि मेरे घर आये हैं।

रे ! मेरे हृदय ! अपना एक स्वागत गीत गाकर अपने घर आये अतिथियों का स्वागत कर।

रे हृदय ! तू एक ऐसा गीत बना जिसमें सूर्य-ज्योति का नीलवर्ण आभासित हो, एक ऐसा गीत बना जिसमें ओस-बिन्दु से सींचित पवन की शीलता हो, एक ऐसा गीत बना जो प्रफुल्लित हृदय जैसे खेतों के स्वर्णिम वैभव से सुवासित हो, और देख !—हाँ, तू एक ऐसा गीत बनाना जिसमें सागर के कलित कोलाहल की हँसी निहित हो।

—अथवा—यदि तू ऐसा न कर सके तो देख ! शब्दहीन होकर अपने अतिथि के सन्मुख केवल एक क्षण के लिए खड़ा हो जाना और उसके मुख की ओर त्रसित नेत्रों से देखने लगना।

—तत्पश्चात् अपने घर को छोड़कर तू भी उसके साथ किसी शान्त स्थान की ओर प्रस्थान कर जाना।

अरे ! तुम तो मुझ भिखारी से भी भिक्षा माँगते हो

मार्ग पर खड़े छायादार वृक्षों की छाया के नीचे ही मेरा निवास-स्थान था। वहीं पड़ा रहकर सूर्य रश्मियों की आभा से आनन्दित मार्ग के परे जब कुछ निहारने लगता तो पड़ोसियों के उद्यान मुझे दिखाई पड़ने लगते थे।

—वहीं पड़ा रह कर मैंने अनुभव किया कि मैं भूखा हूँ। अतः इसी पीड़ा को लेकर मैं एक द्वार से दूसरे द्वार पर भटकने लगा।

अपने अनन्त भण्डार से जितनी ही अधिक अधिक भिक्षा उन्होंने मुझे दी, उतनी ही अधिकता से पीड़ित होकर मैंने यह जाना कि मुझ भिखारी का कटोरा तो फिर भी खाली रह गया।

एकाएक, एक दिन प्रभात के समय किसी ने मेरा द्वार खोला। मैं अपनी निद्रा को त्याग उठ बैठा और देखा तो—इस प्रकार चिल्ला उठा—'अरे तुम भी मेरे पास भिक्षा लेने आये हो।'

बस तभी एक क्षण में ही निराश होकर, मैंने अपने हृदय को खोलने के लिए उसके ढक्कन को तोड़ दिया और आश्चर्य चकित हो यह खोजने लगा कि—कदाचित्—कहीं मेरे हृदय में कोई धन छिपकर तो नहीं बैठ गया है।

तेरा एक दैविक चुम्बन मुझे अनन्त असफलताओं से मुक्त कर सकता है

अपनी भुजाओं में लेकर, तूने उसका सृजन मृत्यु के मुकुट से किया। हाँ ! —उसी का जो भिक्षुक की भाँति सदैव तेरे द्वार पर खड़ा रहा और यह प्रतीक्षा करता रहा कि यदि जीने के लिए केवल एक कौर भी मिल गया, तो उसे भी वह अपने जीवन के लिए एक प्रीतिभोज समझ लेगा।

असफलताओं से दबे हुए उसके कन्धे पर तूने अपना दांया हाथ रखा और उन प्रेम, शान्ति और सुषमा के प्रतीक अधरों से तूने उसे चूमा—ऐसे अधरों से जो जीवन की उग्रतम तृष्णा को भी सदैव के लिए शान्त कर देते हैं।

मृत्यु-किरीट पहनाकर, तूने उसे प्राचीन संसार के समस्त ज्ञान और राजकीय शक्तियों में मिला दिया और इस प्रकार संसार के साथ समन्वित कर उसे एक रूप बना दिया।

जिस हृदय को मैंने खो दिया उसी को उठाकर तूने अपनी गोदी में रख लिया

अपने हृदय को इस संसार के धूलि-धूसरित मार्ग पर खो दिया था किन्तु तुमने अपने हाथों से उठाकर उसे अपनी गोदी में रख लिया।

आनन्द की खोज करने के प्रयत्न में, मैं केवल दुःख को ही अपने लिए बढ़ाता गया।—किन्तु वह विषादमय शोक जिसे स्वयं तुम्हीं ने मुझे दिया था, वही मेरे जीवन में आकर न जाने कैसे जीवन-उल्लास में बदल गया।

मेरे हृदय की कामनाएँ जब-जब भी टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गईं तब तुम्हीं ने उन टूटी हुई इच्छाओं को बटोरा और उन्हें प्रेम की एक माला में पिरोकर मुझी को दे दिया।

—और जब इस संसार के एक द्वार से दूसरे द्वार पर भटकता फिर रहा था, तभी मेरे जीवन का प्रत्येक भटकने वाला पद मुझे तेरे बड़े द्वार का मार्ग बताकर, तेरे ही अधिक-अधिक समीप मुझे ले जा रहा था।

हम केवल प्रेम के आवेश में यह कह देते हैं—'कि हम सदैव साथ-साथ रहेंगे'

इस संसार-पथ पर चलने के फलस्वरूप मैंने यही अनुभव किया कि मैं एक बड़े भारी जनरव में चल रहा हूँ।

—किन्तु जहाँ-जहाँ भी इस संसार मार्ग का अन्त हो जाता है वहीं-वहीं मैं अपने को अकेला पाता हूँ।

मुझे नहीं मालूम न जाने कब मेरे जीवन का प्रकाशमय क्षण, दिवस को छोड़कर निशा की धूमिल गोधूलि में खो गया और न जाने कब, मेरे साथियों ने मेरा साथ छोड़ दिया।

मुझे इतना भी आभास नहीं है—कि न जाने कब—किस समय तुमने मेरे आने के लिये अपने द्वारों को खोल दिया, और न जाने कैसे अपने ही हृदय के किसी संगीत को सुनकर मैं चकित-सा होकर बस खड़ा रह गया।

पर देखो यदि तुम देख सको तो! क्या अब भी मेरी आँखों में मेरे आँसुओं के अवशेष तुम्हें दिखाई दे रहे हैं?—और सुनो!—यद्यपि शयन भी होगा—प्रेम-दीप भी जलेगा, पर हम तुम सदैव अकेले ही रहेंगे।

हे साहूकार ! मेरे पास कुछ नहीं है, बस यह है कि दो हाथ जोड़े खड़ा हूँ

वे आये और अपने कोलाहलपूर्ण आगमन से मुझे घेरकर तुझे मेरी दृष्टि से छिपा लिया।

मैंने सोचा—मैं अपना उपहार तुझे सबके पश्चात् और अन्त में ही अर्पित करूँ।

अब जब कि दिवस पीला पड़ गया है, उन्होंने मुझसे अपना ऋण लेकर मुझे अकेला छोड़ दिया है।

मैं देख रहा हूँ कि तू मेरे द्वार पर भी धन्ना दिये खड़ा है।

—किन्तु मैंने तो स्वयं ही जान लिया कि तुझे देने के लिये मेरे पास अब कोई भेंट नहीं है, बस जो कुछ है वह यह है कि तेरे सम्मुख मैं हाथ जोड़े विनम्र खड़ा हूँ।

मैं प्रेमी को प्रेम से पृथक् नहीं कर सकता, अतः प्रेम के साथ प्रेमी भी आये

तुमने तो मुझे बहुत कुछ दे दिया,—
किन्तु मैं तो तुमसे और माँगता जा रहा हूँ।

क्या तुम्हें ज्ञात है ?—मैं न केवल एक घूँट जल के लिए तुम्हारे पास आता हूँ वरन् जलमय निर्झर के लिये भी—

मैं न केवल इसलिये तुम्हारे पास आता हूँ कि सांसारिक द्वार पर पहुँचने के लिए तुम मुझे मार्ग दिखा दो वरन् इसलिये भी कि ईश्वर के घर तक पहुँचने के लिए भी तुम्हीं मेरे दिग्दर्शन करो। मैं केवल इस आशा से तुम्हारे पास आता हूँ कि तुमसे प्रेम रूपी उपहार लेने के साथ-साथ उस 'प्रेमी' को भी ले लूँ जो प्रेम-मय होकर मुझे 'प्रेम' देता है।

केवल एक क्षण के लिए मेरे नयनों की ओर टकटकी लगाकर देख

मैं तेरे पास क्यों आता हूँ ? —इसलिए कि तेरा स्पर्श करके दिवस कार्यों को आरम्भ कर दूँ ।

देख सुन ! केवल एक क्षण के लिए अपने नयनों को मेरे नयनों पर रख दे ।

मेरे मित्र देख, तेरी मित्रता से विश्वासित होकर ही मैं अपने काम को जा रहा हूँ ।

सुन ! मेरे मस्तिष्क को अपने संगीत से इसलिये भर दे कि कोलाहल की मरुभूमि में वही संगीत शाश्वत् होकर सदैव गुँजारने लगे ।

ओ ! रे ! अपने प्रेम के सूर्य-प्रकाश से मेरे विचारों की उच्चतम शिखाओं का चुम्बन कर मेरे जीवन की उस घाटी में आ जा जहाँ अनाज के खेत बस पकने को तत्पर हैं ।

मेरी इच्छा है—मैं बस तुम्हारी आराधना ही करता रहूँ

मेरे सन्मुख तुम इस प्रकार खड़े हो जाओ कि तुम्हारी दृष्टि मेरे गीतों को छूकर उन्हें प्रज्वलित कर दे।

अपनी तारिकावलियों के मध्य इस प्रकार खड़े हो जाओ कि अपनी आराधना की ज्वाला को तुम्हारे तारक-प्रकाश से स्पर्शित पाकर प्रदीप्त देख पाऊँ।

संसार के मार्ग-तट पर खड़ी भू-माता किसी की प्रतीक्षा कर रही है—

अतः वह हरा आँचल—जिसे तेरे मार्ग पर उसने फेंक दिया है—उसी पर खड़ा होकर तू उसे धन्यवाद दे।

भू-माता की गोद में जो मेरा 'नमस्कार' फैला हुआ है—उसी को, चरवाहे—पुष्पों और भूमि की हरी घास से स्वयं स्पर्शित होकर, मैं अनुभव करना चाहता हूँ।

संध्या के उस शून्य में जाकर तू खड़ा हो जा जहाँ मेरा हृदय अकेला ही तेरे हृदय की निगरानी कर रहा है—उसी निविड़ निर्जनता के सूने प्याले को अपनी उपस्थिति से भरकर क्या तू मुझे अपने प्रेम की निस्सीमता का अनुमान नहीं करने देगा?

तू भले ही न माँगे पर तेरे प्रेम के बदले में मुझे कुछ अधिक ही देना पड़ेगा

तू अपने प्रेम को मेरी जिह्वा पर खेलने दे और मेरी मनः-शान्ति पर ही उसे विश्राम भी करने दे।

मेरे ही हृदय के द्वारा मेरे जीवन के प्रत्येक कम्पन में उसे विचरण करने दे।

अपने 'प्रेम' को तू यह आदेश दे कि वह भी तारिकावलियों के समान मेरी निद्रा के प्रत्येक अंधकारपूर्ण क्षण में चमकने लगे और जब भी वह मुझे चेतन पाये तभी उषा के समान प्रफुल्लित हो जाये। तू अपने प्रेम को मेरी ही कामनाओं की ज्वाला में जलने दे और मेरे ही प्रेम के प्रवाह में उसे प्रवाहित भी होने दे।

तू मुझसे कह दे, कि तेरे प्रेम को अपने जीवन में ऐसे ही ले आऊँ जैसे वीणा संगीत को ले आती है।

—और तू कहे चाहे न कहे! पर मैं तो तेरे प्रेम को अपने जीवन के साथ समन्वित कर अंत में तुझे ही समर्पित कर दूँगा।

—हाँ तेरा प्रेम अपने जीवन सहित तुझी को अर्पित कर दूँगा।

संसार दूसरों से जाने क्या-क्या कह देता है पर स्वयं से कुछ नहीं कहता

तुमने स्वयं को अपने ऐश्वर्य में खोकर छिपा लिया, मेरे राजा !

ध्यान रखो यदि ऐसा है, तो बालू के एक कण और ओस की एक बिन्दु में तुमसे भी अधिक गर्व स्थित है।

निस्संकोच होकर समग्र सृष्टि उन सब वस्तुओं को अपना कहती है जो भी तुम्हारी हैं किन्तु फिर भी कोई यह नहीं कहता कि उसका ऐसा कहना एक लज्जा की बात है।

तुम स्वयं शान्तिमय रूप में खड़े होकर हमारे लिए किसी स्थान का प्रबन्ध करते हो। यही कारण है कि प्रेम स्वयं अपने दीप को जलाकर तुम्हारी खोज करता है और बिना बुलाये ही तुम्हारी आराधना करने के लिये आ जाता है।

अर्धरात्रि का आकर्षण भी मादकता में किसी सौन्दर्य से कम नहीं

किसी स्थान से प्रीतिभोज का आनन्द लेकर जब मैं अपने घर वापस आ रहा था तब आर्धरात्रि के आकर्पण ने मेरे रुधिर के नर्त्तन को शान्त कर दिया।

—बस फिर क्या था, एकाएक मेरे हृदय की तन्त्री ऐसे सुन्न हो गई जैसे कि किसी विसर्जित तथा जनहीन नाटक-गृह में दीपों के बुझने पर सन्नाटा छा जाता है।

—तब मेरे मस्तिष्क ने अन्धकार को पार कर तारागणों के मध्य अपने को खड़ा कर लिया और तत्पश्चात् मैंने देखा कि हम सब राजकीय-महल के निस्तब्ध आँगन में निडर होकर खेल रहे हैं।

मेरा आना रोकने के लिये तुमने अपने द्वारों को बन्द कर लिया

गत रात्रि को पड़ा हुआ मैं यही सोच रहा था कि किस प्रकार निर्दयी होकर मैंने अपने जीवन के दिनों को व्यतीत किया—तब ही एक क्षण पश्चात् मुझे ध्यान आया—तुमने मुझसे कहा था—

अपने यौवन के चिंताहीन जीवन में तुम्हारे गृह-द्वार खुले पड़े रहते थे।

संसार स्वच्छंद होकर तुम्हारे घर में प्रवेश करता और फिर अपनी इच्छा से ही बाहर निकल आता, और उसी प्रकार संसार से सम्बन्धित धूलि, संदेह, अव्यवस्था और संगीत भी इच्छानुसार कभी अन्दर जाते और कभी बाहर आ जाते थे।

—यदि ऐसा था तो एक अज्ञात और अनादेशित के समान संसार के समस्त जलगण को साथ लेकर मैं तुम्हारे पास आया ही करता था।

यदि जनहीन एकाकीपन को पाने के लिए ही तुमने अपने द्वारों को बंद कर लिया था, तो बताओ, मैं किस प्रकार मार्ग पाकर तुम्हारे घर आ गया।

सर्वेश्वर जब तुम आते हो तब कोई किसी को धक्का नहीं देता

यह उचित नहीं कि तुम्हें स्थान देने के लिए किसी दूसरे को उस जगह से हटा दिया जाये अथवा धक्का दे दिया जाये।

यदि प्रेम और आदर की भावना तुम्हारे बैठने के लिए किसी स्थान का प्रबन्ध करती है तो साथ ही वही उन सबके लिए भी बैठने का प्रबन्ध करती है जिन्होंने तुम्हारे लिए किसी स्थान को छोड़ दिया।

जहाँ कहीं भी इस लौकिक संसार का राजा दिखाई पड़ जाता है वहीं उसी समय उसके अंगरक्षक स्वामी के स्वागत में आई हुई भीड़ को हटाने लगते हैं।

—पर मेरे सर्वेश्वर! जब तुम आते हो तो समस्त सृष्टि तुम्हारी चेतनता के साथ ही चली आती है और कोई भी तुम्हारी रक्षा के हेतु किसी दूसरे को धक्का नहीं देता।

तेरे जाने के बाद, तेरी सेवा के बदले में केवल एक दीप] जला देते हैं

अपने प्रातःकालीन गीतों को गाकर वह मेरा द्वार खट-खटाता है—इसलिये कि अपनी उषा के शुभ नमस्कार को मुझे अर्पित कर दे।

बस उसी के आने के पश्चात् हम अपनी गायों को चरागाहों की ओर ले जाते हैं और उन्हें चरने के लिये छोड़कर स्वयं किसी छाया में बैठ अपनी बाँसुरी बजाने लगते हैं।

बाज़ार के जनरव में हम उसे केवल इसलिये खो देते हैं कि खोने के बाद उसे खोज निकालें और फिर पा लें।

दिवस के उस तल्लीन समय में जब सब अपने कार्य में रत रहते हैं—हम एकाएक उसके पास पहुँच जाते हैं और वह कहीं किसी पथ की घास के तट पर ही बैठा मिल जाता है।

जब वह अपने नगाड़ों को पीटने लगता है तो हम चलने लगते हैं और जब वह गाता है तो हम नाचने लगते हैं।

—अपने हर्ष और विषाद का दाँव लगाकर हम अन्त तक उसके खेल को खेलते हैं।

हमारी नौका की चालन-शक्ति को अपने हाथ में ले, वह वहीं खड़ा हो जाता है, और तब उसके साथ ही स्वयं हम भी सागर की भयानक लहरों पर टकराते रहते हैं।

यद्यपि दिवस् अपनी यात्रा समाप्त कर बीत जाता है, पर क्या हुआ, उसके लिए हम भी एक दीप जला देते हैं और उसकी प्रतीक्षा भी करते हैं।

'कि—वह सदैव तुम्हारे साथ है'—तुम इस बात को न भूलना

तुम भी उसके साथ ऐसे ही दौड़ो जैसे उसके मित्रगण दौड़ते हैं और दौड़कर वहाँ पहुँच जाओ जहाँ वह अपने साथियों के साथ काम करता है ।

वह जहाँ भी खेल खेल रहा है वहीं तुम भी उसके साथियों के साथ उसके चारों ओर बैठ जाओ ।

जहाँ कहीं भी वह जाता है वहीं तुम भी उसके अनुगामी बनकर जाओ और उसके नगाड़े की प्रत्येक चोट से उत्पन्न लय के साथ अपने प्रत्येक पद-चाप को मिला दो ।

जीवन के जनरव रूपी मेले में तुम भी घुस पड़ो क्योंकि यही जनरव, जीवन और मृत्यु का एक मेला है—और यहीं—इसी के मध्यस्थ 'वह' भी अपनी समग्र सृष्टि सहित रहता है ।

कंटक-पथ के द्वारा पहाड़ियों को पार करते समय तुम अपनी यात्रा में कहीं लड़खड़ाना मत ।

तुम्हारी यात्रा के समय उसकी प्रत्येक पुकार तुम्हारे प्रत्येक पद के साथ गूँजेगी और तब तुम समझ लेना कि तुम्हारी यात्रा की भयावह स्थिति में भी वह तुमसे प्रेममय वार्तालाप कर रहा है ।

अपनी कलियों की गोद में सोए हुए पुष्पों को न तो जगाओ और न तोड़ो

प्रातःकाल, तुम्हारे मन्दिर में घण्टों और घड़ियालों के बजते ही स्त्री और पुरुष अपनी पुष्पक-भेंटों को लेकर बनीले-मार्ग को द्रुत गति से पार करने लगे।

किन्तु मैं तो वहीं किसी घास पर पड़ा रहा और तुम्हारे पुजारियों का मैंने अवरोध नहीं किया।

—अब मैं सोचता हूँ, मेरा उस समय निश्चल एवं शान्त होकर सुस्त पड़ा रहना अच्छा ही था क्योंकि उस समय पुष्प कलियों की क्रोड में सोए हुए थे।

—वे बेचारे केवल अब संध्या में कलियों की गोद से उठे हैं। अतः मैं भी अब अपनी संध्या-पूजा के लिए जा रहा हूँ।

वही मुझसे न जाने क्या-क्या कहता रहता है और उसी की बात मैं मान लेता हूँ

मेरे राजा का मार्ग मेरे घर के सामने है। वही मेरा राजा, मेरे हृदय में एक कामुक इच्छा उत्पन्न कर देता है।

मेरे राजा का मार्ग मुझे सैन और कनखियाँ दिखाता है, और उसी की शान्ति मुझे पुकार-पुकार कर घर से ले जाती है। उसी का मार्ग अपनी मूक प्रार्थनाओं से मेरे चरणों को प्रत्येक पद पर चूमता है।

मुझे नहीं मालूम न जाने किस बनवास को अपनाने के लिये वह मुझे प्रेरित करता रहता है। मुझे यह नहीं ज्ञात है--न जाने किस विषाद के आश्चर्यजनक क्षणों अथवा जीवन की किन लाभप्रद घड़ियों की ओर वह मुझे प्रवाहित कर रहा है। कोई बतायेगा क्या ? कहाँ पर उसके इन चक्करदार मार्गों का अन्त होता है।

हाँ, मुझे तो केवल इतना ज्ञात है कि मेरे राजा का मार्ग मेरे घर के सामने है और मेरा राजा ही मेरे हृदय में एक कामुक इच्छा उत्पन्न कर देता है।

उसे अर्पित करने के लिए मेरे पास केवल एक गीत है

दिवस अवसान् के समय जब अपने राजा के घर लौटता हूँ तब यात्रीगण मुझसे पूछते हैं—

"राजा के प्रति श्रद्धा जताने के लिए तेरे पास क्या है ?"

बताओ, उन्हें कैसे दिखाऊँ अथवा कैसे बताऊं कि मेरे पास क्या है, क्योंकि मेरे पास तो बस केवल एक गीत है ।

मेरे घर में बहुत-सी वस्तुएँ बनाई गई हैं । अतः वहाँ दावेदारों का उनके प्रति दावा भी अधिक है और माँग भी अधिक है ।

किन्तु अपने राजा के घर आते समय तुम सच समझो, मेरे पास केवल एक गीत रह गया है और केवल इसी को, मैं, उसकी माला के लिए उसे अर्पित करूँगा ।

यदि कोई मुर्झा कर धूलि में गिर जाये तो इसमें दुःख की बात क्या है

मेरे गीत उन बसन्त-पुष्पों के समान हैं जिन्हें तुम अपने उद्यानों में प्रफुल्लन के लिए भेजते हो, किन्तु मैं तुम्हारे पास इस रूप में उन्हें लाता हूँ मानो कि वे सब पुष्प मेरे ही हैं।

इन्हें देखकर पहले तो तुम मुस्कराते हो, फिर स्वीकार कर लेते हो, किन्तु मेरे गर्वोल्लास पर तुम हँस क्यों पड़ते हो ?

यदि मेरे गीत-पुष्प दुर्बल होने के कारण मुर्झा कर धूलि में गिर गए हैं तो इस पर मुझे कोई दुःख नहीं।

मुझे सम्भवतः ज्ञात है कि तुम्हारे हाथों में रहकर अनुपस्थिति से कोई हानि नहीं क्योंकि समय के प्रवाह में जो क्षण खो जाते हैं वही सौन्दर्यपूर्ण और आकर्षक बनकर फिर से खिलते हैं और तुम्हारी माला में आकर सदैव के लिए नित्य बन जाते हैं।

निराशा के मध्य रहकर भी समस्त मानव-संसार आशा से प्रेरित होता रहे

मेरे नृपति ! तुमने मुझे इसलिए बुलाया कि मैं किसी मार्ग के सहारे खड़ा होकर अपनी बाँसुरी बजाऊँ।

तूने मुझे इसलिये बुलाया कि ये जो शान्त जीवन के भार को सह रहे हैं—एक क्षण के लिए अपने संदेशों को भेजना बंद कर दें और महल के छज्जे पर बैठकर आश्चर्यचकित हो जायें।

तूने मुझे यह बताने के लिए बुलाया कि वे पुराने संसार को भी नए रूप में देखें और उसके सम्बन्ध में जो कुछ बीत चुका है उसे सदैव नवीन और आधुनिक समझें।

तू चाहता है—वे सदैव यही कहें—"पुष्प अब भी खिल रहे हैं और चिड़ियायें अब भी गा रही हैं।"

बचपन के गीतों ने मुझे इस लोक में जिलाया और वही परलोक में भी जिलायेंगे

अपने हृदय में बचपनी गीतों के जागने पर मैंने सोचा यह तो वही गीत है जो प्रातः-पुष्पों के साथ खिला करते थे।

जब उन्होंने अपने पंखों को हिलाया और अराजकतामय सूनेपन में उड़ने को तत्पर होने लगे तो मुझे ऐसा जान पड़ा मानो कि उनमें ग्रीष्म की प्रेरणा प्रकम्पित होकर आ गई है—और वह शक्ति आ गई है जो एकाएक गरजकर किसी बड़ी हँसी में उतर आती है।

मैंने अनुभव किया मेरे बचपनी गीतों में उन तूफानों की वह पागल पुकार निहित है जो अपने मार्ग को सूर्यास्त से आतंकित भूमि के क्षितिज में खो देती है।

किन्तु अब सन्ध्या के धूमिल प्रकाश में मुझे तट की नीली रेखा दिखाई पड़ रही है, और साथ ही यह आभास भी हो रहा है कि मेरे गीतों ने ही मेरे लिए ऐसी नौका का काम किया है जिसने संसार-सागर के उग्रवक्षःस्थल से निकल कर मुझे आशा के तटरूपी बन्दरगाह पर ला खड़ा किया है।

उस अवसर की खोज में हूँ कब तुम्हारे जीवन के साथ समन्वित हो जाऊँ

तुम्हारी वीणा में अनन्त तार हैं, क्या मैं भी तुम्हारी वीणा में अपने हृदय के कुछ तार समर्पित कर सकता हूँ ?

जब जब भी तुम अपने तारों को झनझनाते हो तभी मेरा हृदय अपनी शान्ति को तोड़ बैठता है और मेरा जीवन तुम्हारे गीतों के साथ एक्य हो जाता है ।

तुम्हारी अनन्त तारिकाओं के मध्य, क्या मैं भी अपने छोटे-से क्षीण्-से दीप को रखने का अधिकारी हूँ ?

ज्योतिर्मय दीपों की दीपावली के अवसर पर प्रकाश रूपी नृत्यांगना का नाच होते समय मेरा हृदय रोमांचित हो जायेगा और तब मैं अपने जीवन को तुम्हारी ही शाश्वत् मुस्कान के साथ समन्वित कर 'एक' कर दूँगा ।

मैं और मेरे गीत, तेरी और तेरे गीतों की क्या समानता कर सकते हैं

मेरा गीत इतना साधारण तथा सहल है जितनी कि उषा की चेतना—इतना भोला जितना कि ओस कण का पत्तियों पर से फिसलना।

मेरा गीत इतना हल्का है जितना कि बादलों का रंग, और इतना भारहीन है जितनी कि अर्धरात्रि की वर्षा। पर मेरी वीणा के तार अभी नये हैं और उसके गीत इतने ही भेदीले और तीखे हैं जितना कि नये भालों का तीखापन।

इस प्रकार वे पवन की कल्याणकारी शक्ति को खो देते हैं आकाश की ज्योति को चोट मार देते हैं। मेरे गीत तेरे संगीत की महानता नहीं कर पाते और साथ ही मेरे गीतों को हराते समय असमर्थ-से हो जाते हैं।

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ 'मृत्यु में भी तेरा अनुभव करने का प्रयत्न करूँगा'

जीवन के नृत्य-भवन में जब तू अपने संगीत के साथ रंग-रेलियाँ कर रहा था तब मैंने तुझे देखा था।

बसन्त के प्रस्फुटन तथा वसन्त की कोमल पत्तियों के उद्रेक के अवसर पर मैंने अनुभव किया कि तेरी हँसी मेरा अभिवादन कर रही है।

—उद्यानों की पुष्पक सेज पर जब तू प्रेम-भाव में पड़ा हुआ किसी से कुछ कह रहा था तब मैंने तेरी प्रेममय कानाफूसी को सुन लिया था।

तेरा आशामय सन्देश एक बालक ने मुझे मेरे ही घर पर लाकर दे दिया है।—और एक नारी ने तेरे प्रेम का संगीत भी मुझे सुना दिया है।

अब स्वयं मैं भी सागर के तट पर पड़ा हुआ उस शुभ क्षण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब अपनी मृत्यु में भी तेरा अनुभव कर सकूँगा—उस क्षण की शुभ बेला की ओर देख रहा निशा के तारकीय गीत फिर से मेरे जीवन को मेरा संगीत देंगे।

बचपन, एक बीती हुई बात बन गया---बस एक गीत बन गया जिसे गा चुका हूँ

मुझे अपने उस बचपन की स्मृति है जब सूर्य की उदित बेला, मेरे साथी के समान मेरे शयन स्थान पर प्रातः के विस्मय के समान फूट पड़ती थी।

साधारण-सी हँसी हँसते हुए मेरे बचपन में विश्वास ऐसे ही दिव्य हो जाता था जैसे नवीन पुष्प नित्य प्रति मेरे हृदय में खिल कर शस्मित-सा दीखने लगता है।

मुझे स्मृति है---छोटे-छोटे कीड़े, पशु और पक्षी तथा घास और बादल अपने-अपने आश्चर्यजनक विस्मय के मूल्य को पूर्णतया पहचानते थे।

मुझे उन दिनों का ध्यान है जब निशामय रात्रि में वर्षा की झड़ी अप्सराओं के देश से सुन्दर स्वप्नों को ला-लाकर मुझे ...नी थी और संध्या समय माँ की बोली तारिकावलियों को अर्थ का सन्देश भेजा करती थी।

...--और तब---जब भी मैं मृत्यु और उषा-अवतरण के ... मैं सोचता था तभी मेरा हृदय प्रेम के हृदयस्पर्शी ...स्मय से रोमांचित होकर जाग उठता था।

अपना 'प्रेम' देने के पश्चात् तुझे फूलों का हार भी पहना दिया, बस

मेरे प्रिय संसार ! मेरे हृदय ने तुझसे प्रणय करके भी तेरा चुम्बन नहीं किया, तब तेरी मुख कान्ति की आभा न जाने कैसे और न जाने कहाँ खो गई।—बस तभी से तेरा आकाश अपने प्रकाश द्वारा प्रज्वलित होकर आँखें फाड़-फाड़कर मुझे घूरने लगा।

तब—मेरा हृदय अपने गीतों सहित तेरे समीप आया, तुझसे अपनी बातें कहीं और कुछ तेरी सुनीं और तत्पश्चात् उसने तेरे गले में एक जयमाल भी डाल दी।

मुझे विश्वास है—मेरे हृदय ने तुझे वह सब कुछ दे दिया है जिसे तू बड़ी सावधानी से अपनी तारिकाओं के कोष में रख लेगा।

सागर भी अपने गम्भीरतम् रहस्य को छिपा नहीं सकता

अपनी खिड़की पर और अपने ही स्थान पर बैठने का अवसर तूने मुझे सुबह से ही दे रखा है।

मैंने तेरे पथ के उन सेवकों से बातें कर ली हैं जो तेरे आदेशों और सन्देशों को लेकर दौड़ रहे हैं।—और तेरे आकाश को ही अपनी वीणा का तार मान कर मैं सब कुछ गा चुका हूँ।

मैं सागर को उसी की अथाह और अमाप्य शान्ति की स्थिति में देख चुका हूँ। मैंने सागर के तूफान को अपनी ही गहनता के रहस्य को तोड़ने के लिए आतुर और व्याकुल भी देखा है।

मैंने भूमि को उसकी युवावस्था के अत्यन्त खर्चीले प्रीतिभोज में भी देखा है और साथ ही विचार छाया में मग्न रहने वाले उसके निस्तेज क्षणों को भी।

जो किसान खेतों में बीज बोने के लिये गये थे—उन्होंने मेरे अभिवादन को स्वीकार कर लिया है और वे भी जो अपने घर को आते समय फसल लेकर आते हैं अथवा खाली टोकरी लेकर आते हैं, अपने मार्ग में मुझे गाता हुआ पाते हैं।

—इसी प्रकार दिवस बीत जाता है और तब संध्या समय अपने अन्तिम गीत को गाकर मैं यही कहता हूँ—"हाँ मैं तेरे संसार से प्रेम करता हूँ।"

मेरा हृदय तोड़ने में यदि तुझे सुख मिलता है तो निःसंकोच तोड़ दिया कर

मेरे भाग्य में लिखा है---कि तेरे गायक की सेवा करूँ।

तेरे बसन्त-पुष्पों को मैंने अपने गीतों में गाया है और तेरी पत्तियों के संघर्ष को एक लय से सृजित किया है।

मैंने अपने गीतों को उस समय गाया जब निशा की नीरवता स्तब्ध थी और उषा की सौम्यता शान्त होकर पड़ी हुई थी।

ग्रीष्म की प्रथम वर्षा का रोमांच और पतझड़-फसल की हिलोरें---दोनों ही मेरे संगीत की तरंगों में आ जाया करते हैं।

मेरे सर्वेश्वर ! मेरे स्वामी ! मेरे हृदय को तोड़कर जब भी तू मेरे घर में आना चाहे, तो आना, पर कहीं मेरे गीत की गति को बन्द मत कर देना।---पर हाँ ! तेरे स्वागत में यदि स्वयं ही मेरे हृदय का विस्फोट हो जाये और उसकी गति बन्द हो जाये तो कोई बात नहीं।

अतिथि ईश्वर का ही रूप है, अतः मेरे यहाँ अतिथि का स्वागत् है

मेरे जीवन के अतिथियो ! तुम ही उषा में और तुम ही निशा में मेरे पास आते हो।

बसन्त-पुष्पों ने मुझे उनका नाम बता दिया है जो प्रातः की उषा में मेरे गृह-द्वार में प्रवेश करते हैं।—और वर्षा की झड़ी में भी मुझे उनका नाम बता दिया है जो निशा में मेरे पास आते हैं।

मेरे कुछ अतिथि तो संगीत साज लेकर आये और कुछ दीपक लेकर आये। किन्तु मेरे अभ्यागतों के मुझसे बिदा लेकर चले जाने पर, मुझे अपने घर के फर्श पर ईश्वरीय-पदचिह्न दिखाई पड़ने लगे।

अब—जब कि मेरी तीर्थ-यात्रा समाप्त होने पर है—मेरी इच्छा है—पूजा के संध्या-पुष्पों को तुम सबके लिए अपना अभिवादन दे दूं।

पर हाँ, सांसारिक बाधायें मुझे आगे बढ़ने से न रोक सकेंगी

निशा समय नौका को तैराते हुए मैंने तुम्हारा मुख देख लिया था।

—तुम्हारे मुख को देखकर मैंने तुरन्त अपनी नौका को निशा के आँचल में ही छिप जाने के लिए कह दिया।

अब उषा मुस्करा रही है और मधुमय बसन्त के पुष्प खिल रहे हैं। किन्तु यदि प्रकाश लुप्त हो जाये और पुष्प मुर्झा जायें तब भी मेरी नौका नहीं रुकेगी और मैं आगे ही बढ़ता रहूँगा।

उस समय जब तुमने मुझे मूक संकेत से बुलाया, संसार सोया हुआ था और निशा की कालिमा नग्न पड़ी हुई थी।

घंटियाँ जोर-जोर बज रही हैं और मेरी नौका स्वर्ण से लदी हुई है; किन्तु यदि घंटियों का शब्दनाद बन्द हो जाये और नौका भी स्वर्ण-रहित हो जाये तो भी मैं नहीं रुकूँगा, अपितु आगे ही बढ़ता रहूँगा।

कुछ नौकायें आगे बढ़ चुकी हैं और कुछ चलने के लिये तत्पर खड़ी हैं, पर मुझे विश्वास है, मेरी नौका किसी से पीछे नहीं रहेगी। मेरी नौका के पालों में भी वायु भर चुका है और दूर तट

से चिड़ियायें किसी संदेश को लेकर उड़ रही हैं; किन्तु यदि पाल गिर जायें अथवा सागर-तट का संदेश शून्य में तिरोहित हो जाये तब भी मेरी नौका और मैं आगे ही बढ़ते रहेंगे।

जो जीवन सुख का एक क्षण वही अनन्त दुःख का एक युग है

"पथिक तुम कहाँ जा रहे हो ?"

"उषा की लालिमा के बिखरने पर सागर में नहाने जा रहा हूँ और उस पथ से जा रहा हूँ जिसके दोनों ओर वृक्ष लगे हुए हैं।"

"यात्री क्या तुम बता सकोगे—सागर कहाँ है ?"

"सागर वहाँ है जहाँ नदियों ने पथ का अन्त किया है, वहाँ है जहाँ निशा की उषा, प्रातः की अरुणिमा में खिल उठती है, वहाँ है—जहाँ दिवस् संध्या के सम्मुख नत्-मस्तक हो जाता है।"

"पथिक क्या बता सकोगे तुम्हारे साथ कितने पथिक और हैं ?"

"उन्हें कैसे गिन लेता ?—यह मेरी समझ में नहीं आता ? वे सारी रात अपने दिये जलाये यात्रा करते रहे हैं और अन दिन में भी वे सारे दिन भूमि और जल के द्वारा अपने गीत गुन-गुनाते रहते हैं।"

"राही तुम्हारा सागर कितनी दूर है ?"

"वह कितनी दूर है—यह तो हम सब भी पूछते हैं ? किन्तु हाँ, जब हम निस्तब्ध हो जाते हैं तब उसकी उत्तेजक तरंगों की गड़गड़ाहट हमें आकाश तक उड़ती हुई प्रतीत होती है हमें ऐसा

आभास होता है कि वह सागर हमारे निकट ही है किन्तु वस्तुतः वह बहुत दूर हैं।"

"राही सूर्य इतनी तीव्रता से क्यों पिघल रहा है ?"

"—इसलिये कि हमारी यात्रा अनन्त और दुःखपूर्ण है।"

तुमने और कुछ तो स्वीकार नहीं किया, मेरा अन्तिम अभिवादन ही स्वीकार कर लो

मेरे पथ-मित्र ! एक पथिक के रूप में तुझे अपना अभिवादन अर्पित करने आया हूँ।

मेरे व्यथित हृदय के स्वामी ! अवसाद, वियोग और जीवन गोधूलि की दुःखमय शान्ति के देवता ! तुझे मेरे गृह-स्थान के भग्नावशेष का अभिवादन स्वीकार हो।

ओ ! नवोदित् ! उषा के प्रफुल्लित प्रकाश ! ओ ! शाश्वत् दिवस् के देदीप्यमान सूर्य ! मेरी चिरजीवित और अक्षुण्ण आशा का अभिवादन स्वीकार करो।

मेरे पथ-प्रदर्शक ! मैं तो एक अनन्त का पथिक हूं, अतः एक पथिक के अन्तिम अभिवादन को स्वीकार करो, देव !